मान मन्दिर बरसाना

मासिक पत्रिका, अगस्त २०२३, वर्ष ०७, अंक ०८

श्री कृष्ण जन्माष्टमी विशेषांक

मूल्य१०/-

गुरुपूर्णिमा के पावन पर्व पर पूज्यश्री बाबा महाराज अपने गुरुदेव 'श्री प्रियाशरण बाबा' व 'श्रीजी' का पूजन करते हुए

अनुक्रमणिका

विषय- सूची — पृष्ठ- संख्या

१ परमानन्दकारी 'श्रीकृष्ण-जन्म'.....०५
२ देवकीनन्दन 'कृष्ण'.....०८
३ वसुदेवनन्दन 'नन्दनन्दन' में विलीन.....१२
४ श्रीनन्द-महोत्सव.....१४
५ 'श्रीकृष्णावतार' से हुआ सर्वसमृद्धिमय 'ब्रज'.....१८
६ सबसे बड़ा संरक्षक 'श्रीनाम-आराधन'.....२१
७ 'सहनशीलता व समत्व' से सरस चित्त.....२५
८ श्रीभागवत-सार 'माधुर्ययी भक्ति'.....२८
९ ब्रजप्रेम-प्रदायिनी 'ब्रज-कीच'.....३०
१० गोपिकाओं का जीवन-सार 'श्रीकृष्णलीलारस'.....३२

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो |
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो |
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो |
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो |
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो |
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्‌यो | — *पूज्यश्री बाबामहाराज कृत*

संरक्षक– **श्रीराधामानबिहारीलाल**

प्रकाशक – **राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान, गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)**

mob. राधाकांत शास्त्री 9927338666

ब्रजकिशोरदास.....6396322922

(Website :www.maanmandir.org)

(E-mail :info@maanmandir.org)

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले |"

*** योजना ***

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकालें व मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवाद्रव्य किसी विश्वसनीय गौसेवा प्रकल्प को दान कर गौरक्षा कार्य में सहभागी बन अनन्त पुण्य का लाभ लें | हिन्दूशास्त्रों में अंशमात्र गौसेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है |

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ७:३० से ८:३० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:३० से ८:०० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं |

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंश के बराबर भी नहीं हो सकता |

प्रकाशकीय

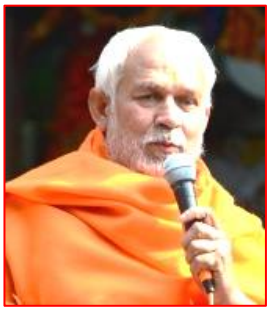

भगवान् श्रीकृष्ण अन्य सभी अवतारों के मूल अंशी हैं । श्रीकृष्ण के अतिरिक्त जितने भी अवतार हैं, वे सभी अंशावतार या कलावतार ही हैं । समस्त जीव-जगत के आराध्य 'कृष्ण' की भी परमाराध्या 'श्रीराधारानी' हैं । श्रीराधामाधव युगल रसराज परस्पर में एक-दूसरे के सबसे बड़े आराध्य व आराधक हैं अर्थात् श्रीराधिकारानी सबसे बड़ी आराध्या व आराधिका हैं तथा श्रीश्यामसुन्दर सबसे बड़े आराध्य व आराधक हैं । 'राधिकारानी' कृष्ण की आराधना करती हैं और 'श्रीकृष्ण' राधारानी की आराधना करते हैं; इस भाव से सम्बन्धित पूज्य श्रीबाबामहाराज की एक पद-रचना है जो बाबाश्री की ही कृति 'स्वर वंशी के, शब्द नूपुर के' नामक काव्य में संकलित है, जिसकी शब्द-शैली इस प्रकार से है – '

युगल नाम श्रुति सार है राधे कृष्ण राधे कृष्णा ।
राधा रटें निकुँजबिहारी,
राधा नामहि बने पुजारी,
राधा ही रस-सार है राधे कृष्णा राधे कृष्णा ।
कृष्ण नाम रटैं राधारानी,
कृष्ण नाम सों अति रति मानी,
कृष्ण नाम उद्धार है राधे कृष्णा राधे कृष्णा ॥

जब धराधाम (श्रीब्रजभूमि) में श्रीकृष्णावतार होता है तभी श्रीराधारानी के अवतार की भूमिका बनती है । राधिकारानी की कृपा से ही श्यामसुन्दर रसमयी लीलायें करते हैं, जिससे अवतार का मुख्य प्रयोजन (रासलीला इत्यादि करना) सिद्ध होता है ।

प्रस्तुत अंक में श्रीबाबामहाराज द्वारा कथित 'श्रीभागवत-सप्ताह-कथा' से 'श्रीकृष्ण के अवतार का प्रसंग' संकलित किया गया है । श्रीश्यामसुन्दर की ब्रजलीलायें जन-जन में सरस भक्ति के आविर्भाव होने के लिए ही हुई थीं –

'किए चरित पावन परम प्राकृत नर अनुरूप ।'

हम सब जीवों पर अत्यन्त करुणा करके श्रीभगवान् ने संसारी मानव की तरह अति साधारण (प्राकृत) लीलाएँ कीं, जो परम पवित्र करने वाली हैं, जिसके श्रवण-स्मरण-चिन्तन से सहज ही मन 'श्रीराधामाधव युगलसरकार' में लग जाएगा । इन्हीं भावनाओं को लेकर ही मासिक पत्रिका 'मानमन्दिर, बरसाना' निःशुल्क वितरण की जाती है कि हम लोगों का रोम-रोम 'श्रीभगवान् के लीलारस' से भर जाए, जिससे हमारा तन-मन-प्राण सतत् 'सत्संग-सरिता' में अवगाहन करता रहे ।

प्रबन्धक

राधाकान्त शास्त्री

श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

परमानन्दकारी 'श्रीकृष्ण-जन्म'

बाबाश्री द्वारा कथित श्रीमद्भागवत-सप्ताह-कथा (२६/२/१९८५) से संकलित

जब शुकदेवजी ने भगवान् श्रीकृष्ण के चरित्र के बारे में अत्यन्त संक्षेप में बताया तो राजा परीक्षित ने पूछा –

कथितो वंशविस्तारो भवता सोमसूर्ययोः ।

(श्रीभागवतजी १०/१/१)

भगवन् ! आपने सूर्य वंश और चन्द्रवंश का वर्णन तो कर दिया किन्तु असली मक्खन तो आपने छोड़ ही दिया । श्रीकृष्ण के पूर्वजों की वंशावली का वर्णन करने से क्या लाभ है, श्रीकृष्ण के चरित्र भी तो सुनाइए ।

निवृत्ततर्षैरुपगीयमानाद् भवौषधाच्छ्रोत्रमनोऽभिरामात् ।
क उत्तमश्लोकगुणानुवादात् पुमान् विरज्येत विना पशुघ्नात् ॥

(श्रीभागवतजी १०/१/४)

श्रीकृष्ण का चरित्र तीन प्रकार के लोग गाते हैं । एक तो आत्माराम जीवन्मुक्त महापुरुष श्रीकृष्ण यश का गान करते हैं । दूसरे, मुमुक्षु जन, जो भवसागर से पार होना चाहते हैं, वे भी श्रीकृष्ण गुणगान करते हैं । तीसरे, विषयी लोग (जैसे आजकल सिनेमा के गायक-गायिकायें) भी श्रीकृष्ण चरित्र को गाते हैं । श्रीकृष्ण का गुणगान किसी भी प्रकार से किया जाए, उससे मनुष्य का कल्याण ही होता है । गुरुदेव ! आप मुझे विस्तार से भगवान् श्रीकृष्ण का चरित्र सुनाइए । आपने बलरामजी को रोहिणी का पुत्र बताया तथा देवकी का भी पुत्र बताया तो उनके दो माताएँ एक साथ कैसे थीं ? भगवान् श्रीकृष्ण अपने पिता वसुदेवजी का घर छोड़कर ब्रज में क्यों गये ? ब्रज में उन्होंने कौन-कौन-सी लीलायें कीं, कितने दिन वहाँ रहे, ये सब आप मुझे बताइए । मैंने अन्न तो क्या जल का भी त्याग कर दिया है किन्तु मुझे भूख-प्यास बिलकुल भी नहीं सता रही है क्योंकि मैं आपके मुखकमल से झरती हुई भगवान् की अमृतमयी लीला कथा का पान कर रहा हूँ ।

सूतजी कहते हैं – शुकदेवजी राजा परीक्षित का प्रश्न सुनकर बहुत प्रसन्न हुए । इसके बाद उन्होंने भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन करना प्रारम्भ किया ।

श्रीशुकदेव जी ने कहा – भगवान् श्रीकृष्ण की कथा के सम्बन्ध में प्रश्न करने से ही वक्ता, प्रश्न करने वाला और श्रोता तीनों ही पवित्र हो जाते हैं – जैसे गंगाजी का जल या भगवान् शालग्राम का चरणामृत सभी को पवित्र कर देता है – **वासुदेवकथाप्रश्नः पुरुषांस्त्रीन् पुनाति हि ।**
वक्तारं पृच्छकं श्रोतृंस्तत्पादसलिलं यथा ॥

(श्रीभागवतजी १०/१/१६)

एक बार लाखों दैत्यों के दल ने घमण्डी राजाओं का रूप धारण करके अपने पापों के भार से पृथ्वी को रौंद डाला था, उससे छूटने के लिए वह सुमेरु पर्वत पर ब्रह्माजी की शरण में गयी । उस समय पृथ्वी ने गाय का रूप धारण कर रखा था । ब्रह्माजी को उसने अपना सारा कष्ट सुनाया । उसके कष्ट को सुनकर ब्रह्माजी भगवान् शंकर, स्वर्ग के अन्य प्रमुख देवताओं तथा गो रूपा पृथ्वी को लेकर क्षीर सागर के तट पर गये । वहाँ पहुँचकर ब्रह्मादि देवताओं ने भगवान् की स्तुति की । स्तुति करते-करते ब्रह्माजी को समाधि लग गयी । समाधि में ब्रह्माजी ने आकाशवाणी सुनी । भगवान् ने कहा – 'मैं पृथ्वी पर अवतार लूँगा, तब तक तुम लोग भी पृथ्वी पर यदुवंश में जन्म लो । देवताओं की स्त्रियाँ भी मेरी प्रिया जी की सेवा के लिए जन्म ग्रहण करें । सहस्त्रमुख शेष जी भी अवतार ग्रहण करेंगे, मेरी योगमाया भी अवतार लेगी ।'

श्रीशुकदेवजी कहते हैं – ब्रह्माजी ने आकाशवाणी के द्वारा जो कुछ सुना, वह सब देवताओं को बता दिया । मथुरा में भगवान् श्रीहरि नित्य विराजमान रहते हैं –

मथुरा भगवान् यत्र नित्यं संनिहितो हरिः ।

(श्रीभागवतजी १०/१/२८)

एक बार बार मथुरा में वसुदेवजी का देवकी के साथ विवाह हुआ । उस समय उग्रसेन का पुत्र कंस, जो अपनी चचेरी बहन देवकी से बहुत प्रेम करता था, रथ पर देवकी-वसुदेव को बैठाकर स्वयं ही रथ को हाँककर देवकी को विदा करने के लिए चला । देवकी के पिता देवक कंस के चाचा थे । जब कंस इस प्रकार रथ को हाँक रहा था, उसी समय कंस को सम्बोधित करते हुए आकाशवाणी ने कहा – 'अरे मूर्ख ! जिसे तू रथ में बैठाकर ले जा रहा है, इसी देवकी का आठवाँ गर्भ तेरा काल होगा, वह तुझे मारने वाला होगा ।' कंस बड़ा पापी था । आकाशवाणी सुनते ही उस

दुष्ट ने देवकी के बाल पकड़ लिए और उसे मारने के लिए अपनी तलवार निकाल ली । उस समय वसुदेवजी ने उससे कहा – 'राजकुमार ! आप तो अत्यन्त प्रशंसनीय गुणों वाले हैं । आप अपनी बहन को विवाह के शुभ अवसर पर क्यों मारते हैं ?' वसुदेवजी ने कंस को बहुत ज्ञान दिया । उन्होंने कहा – 'जैसे चलते समय मनुष्य एक पैर आगे जमा लेता है तब दूसरा पैर उठाता है, उसी प्रकार जब शरीर का अन्त हो जाता है तो जीव दूसरे शरीर को ग्रहण करके तब अपने पहले शरीर को छोड़ता है ।'

शरीर में अधिक राग करने से मनुष्य को उससे मोह हो जाता है और फिर उससे उसका नाश हो जाता है । **'द्रोग्धुर्वै परतो भयम्'** – (श्रीभागवतजी १०/१/४४) इसलिए अपना कल्याण चाहने वाले मनुष्य को किसी से द्रोह नहीं करना चाहिए । क्योंकि द्रोह करने वाले को इस जीवन में तथा परलोक में भी भयभीत होना पड़ेगा । वसुदेवजी के समझाने पर भी कंस अपने निन्दित कर्म से पीछे नहीं हटा, तब वसुदेवजी ने विचार किया कि बुद्धिमान मनुष्य को जहाँ तक हो सके मृत्यु को हटाने का प्रयत्न करना चाहिए । सम्भव है इससे मृत्यु टल जाये अथवा मारने वाला ही स्वयं मर जाए । उन्होंने कंस से कहा कि आपको देवकी से तो कोई भय है नहीं, भय इसके पुत्रों से है तो मैं इसके पुत्रों को लाकर आपको दे दूँगा । कंस ने वसुदेवजी की यह बात स्वीकार कर ली क्योंकि वह जानता था कि वसुदेव जी कभी झूठ नहीं बोलते हैं । समय आने पर देवकी के गर्भ से जो भी पुत्र होते, वे उसे लाकर कंस को सौंप देते थे । जब देवकी के पहला पुत्र हुआ तो उन्होंने उसे लाकर कंस को दे दिया । वसुदेवजी की ऐसी सत्य निष्ठा को देखकर कंस बहुत प्रसन्न हुआ और बोला कि आप इस बालक को ले जाइये, मुझे तो आठवें बालक से भय है । आठवें बालक को ही आप मुझे दीजियेगा । नारदजी ने विचार किया कि इस पापी कंस के पाप का घड़ा जब तक नहीं भरेगा तब तक यह नहीं मरेगा । इसलिए नारद जी कंस के पास उसे उल्टा ज्ञान देने के लिए पहुँचे और बोले – 'ब्रज में रहने वाले नन्द आदि गोप, वृष्णि वंश के वसुदेव आदि यादव, देवकी आदि यदुवंश की स्त्रियाँ – ये सबके सब देवता हैं, दैत्यों को मारने के लिए उत्पन्न हुए हैं । देवकी के गर्भ से तो साक्षात् विष्णु भगवान् ही तुझे मारने के लिए आ रहे हैं ।' जब इस प्रकार नारद जी ने कंस को भड़का दिया तो कंस ने देवकी-वसुदेव को हथकड़ी-बेड़ी से जकड़कर कैद में डाल दिया । कंस जानता था कि मैं पहले कालनेमि असुर था और विष्णु ने मुझे मार डाला था । इसलिए वह उनसे द्रोह करता था तथा उसने यदुवंशियों को भी बहुत सताया ।

श्रीशुकदेवजी कहते हैं – जब कंस ने एक-एक करके देवकी के छः बालक मार डाले तब देवकी के गर्भ में श्रीशेष जी पधारे । इधर भगवान् ने अपनी योगमाया को आदेश दिया – 'हे देवि ! तुम शेषजी को देवकी के गर्भ से खींचकर गोकुल में रोहिणीजी के गर्भ में स्थापित कर कर दो । तुम नन्दबाबा की पत्नी यशोदाजी के गर्भ से जन्म लेना । पृथ्वी में लोग तुम्हें दुर्गा, भद्रकाली, वैष्णवी, शारदा, अम्बिका आदि नामों से पुकारेंगे और तुम्हारी पूजा करेंगे ।' एक बात यहाँ भागवत के टीकाकार आचार्यों ने लिखी है, जो भागवत में नहीं लिखी है । श्रीजीवगोस्वामीजी लिखते हैं – **'प्रागेव श्रीवसुदेवाहितगर्भायाः श्रीरोहिण्याः पश्चाद्गोकुलं गतायाः ।'** पहले ही वसुदेवजी के द्वारा रोहिणीजी में गर्भ स्थापित किया जा चुका था । उसके बाद वह गोकुल गयी थीं । इसके लिए जीवगोस्वामीजी ने हरिवंश पुराण का प्रमाण भी दिया है –

सार्द्धरात्रे स्थितं गर्भं पातयन्ती रजस्वला ।
निद्रया सहसाविष्टा पपात धरणीतले ।

योगमाया ने रोहिणीजी से कहा –

तामाह निद्रासम्विग्नां नैशे तमसि रोहिणीम्
कर्षणेनास्य गर्भस्य स्वर्गेम चाहितस्य वै ।
सङ्कर्षणो नाम शुभे तव पुत्रो भविष्यति ॥

'तुम्हारे गर्भ में संकर्षण(शेष जी) हैं ।' रोहिणी के गर्भ में पहले से स्थापित बालक को योगमाया ने गायब कर दिया । यदि ऐसा न किया जाता तो अचानक ही यदि रोहिणीजी के पुत्र होता तो लोग शंका करते । यदि पहले से ही वसुदेवजी द्वारा रोहिणी में गर्भ स्थापित न किया जाता तो लोग शंका करते । किसी स्त्री के अचानक ही सन्तान उत्पन्न हो जाए तो लोग शंका करेंगे कि पति तो साथ में है नहीं, फिर सन्तान कहाँ से उत्पन्न हो गयी । इसीलिए आचार्यों ने इस

कथा के विषय में आवश्यक रूप से अपनी टीका में लिखा कि जब रोहिणीजी नन्दबाबा के घर में गोकुल आयीं तो उनके पहले से ही गर्भ था, इस बात को यशोदाजी और नन्दबाबा जानते थे । उस गर्भ को योगमाया ने आकर गिरा दिया तथा देवकीजी के गर्भ में जो शेषजी थे, उन्हें लाकर रोहिणीजी के गर्भ में स्थापित कर दिया और फिर जब बलरामजी का जन्म हुआ तो किसी ने रोहिणी जी के प्रति शंका नहीं की । इसके बाद भगवान् देवकीजी के गर्भ में आये । कंस ने देवकीजी को देखा तब वह मन ही मन सोचने लगा कि अभी तक तो देवकी इतनी रूपवती नहीं थी और न ही ऐसा विलक्षण तेज था, जैसा अब है । अवश्य ही अब इसके गर्भ में मेरा शत्रु आ गया है । देवकी के गर्भ में भगवान् के आने से ब्रह्माजी, शंकर आदि समस्त देवता कंस के कारागार में आये और भगवान् की स्तुति करने लगे ।

सत्यव्रतं सत्यपरं त्रिसत्यं सत्यस्य योनिं निहितं च सत्ये ।
सत्यस्य सत्यमृतसत्यनेत्रं सत्यात्मकं त्वां शरणं प्रपन्नाः ॥

(श्रीभागवतजी १०/२/२६)

हे सत्यसंकल्प ! सत्य ही आपकी प्राप्ति का साधन है । सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय में भी आप ही सत्य हैं । पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश – इन पाँच दृश्यमान सत्यों के आप ही कारण हैं और उनमें सत्यरूप से स्थित हैं, आप ही परमार्थ सत्य हैं । हे सत्यस्वरूप परमात्मा ! हम आपकी शरण में आये हैं । इस स्तुति में भगवान् का नाम, उनका स्वरूप – सब कुछ सत्य ही बताया गया है अर्थात् सत्यनिष्ठ व्यक्ति को ही भगवान् मिलते हैं । बेईमान और झूठे व्यक्ति को भगवान् नहीं मिल सकते ।

'पतन्त्यधोऽनादृतयुष्मदङ्घ्रयः' (श्रीभागवतजी १०/२/३२)

आपके चरणकमलों का आश्रय जो छोड़ देते हैं, वे ज्ञानी भी होंगे तब भी नष्ट हो जायेंगे ।

तथा न ते माधव तावकाः क्वचिद् भ्रश्यन्ति मार्गात्त्वयि बद्धसौहृदाः ।
त्वयाभिगुप्ता विचरन्ति निर्भया विनायकानीकपमूर्धसु प्रभो ॥

(श्रीभागवतजी १०/२/३३)

आपके भक्त कभी भी अपने साधन मार्ग से गिरते नहीं हैं । वे बड़े-बड़े विघ्नों के, संकटों के उस पार चले जाते हैं ।

'सत्त्वं विशुद्धं श्रयते भवान् स्थितौ'

(श्रीभागवतजी १०/२/३४)

आप संसार की स्थिति के लिए जो अवतार विग्रह धारण करते हैं, वह विशुद्ध सत्त्वमय होता है ।

भगवान् का शरीर हमारे जैसा नहीं होता है । यहाँ विशुद्ध सत्त्व का अर्थ सतोगुण नहीं लगाना चाहिए । आचार्यों ने लिखा है कि भगवान् का शरीर कैसा होता है ? वे लिखते हैं – **'ज्ञानमयं मायातीतं चिन्मयम्'** भगवान् का शरीर ज्ञानमय, चिन्मय और मायातीत है । इस प्रकार भगवान् की स्तुति करने के बाद देवताओं ने माता देवकी से कहा – 'हे माता ! आपके गर्भ में तो भगवान् हैं, इसलिए आप घबराइए नहीं । कंस तो कुछ दिनों में मरने वाला है । आपका पुत्र यदुवंश की रक्षा करेगा ।'श्रीशुकदेवजी कहते हैं – ब्रह्मादि देवताओं ने भगवान् की इस प्रकार स्तुति की । इसके बाद वे वहाँ से चले गये । श्रीशुकदेव जी कहते हैं – परीक्षित ! अब समस्त शुभ गुणों से युक्त बहुत सुहावना समय आया । दिशायें सुन्दर और प्रसन्न हो गयीं । पृथ्वी मंगलमयी हो गयी । रात्रि के समय भी सरोवरों में कमल खिल रहे थे । परम पवित्र और शीतल-मन्द-सुगन्ध वायु बहने लगी । भाद्रपद (भादों) मास की अष्टमी तिथि थी, सबके मन प्रसन्न हो गये ।

देवकीनन्दन 'कृष्ण'

भगवान् के अवतार के समय स्वर्ग में देवता लोग दुन्दुभियाँ बजाने लगे । किन्नर और गन्धर्व मधुर स्वर में गाने लगे तथा अप्सराएँ नाचने लगीं । देवता और ऋषि-मुनि आनन्द से पुष्पों की वर्षा करने लगे । बादल सागर के पास जाकर गरजने लगे, मानो उससे कह रहे हों कि भगवान् आ रहे हैं, तुम्हारे भीतर द्वारिका पुरी बसाकर रहेंगे तो तुम्हें भी आनन्द मिलेगा ।

मध्य रात्रि के समय भगवान् देवकी के गर्भ से इस प्रकार प्रकट हुए जैसे पूर्व दिशा में पूर्णिमा का चन्द्रमा उदित हुआ हो । वसुदेवजी ने अपने सामने अत्यधिक सुन्दर चतुर्भुज बालक देखा तो वे स्तुति करने लगे । वसुदेवजी ने कहा – प्रभो ! आप अनुभव-आनन्द स्वरूप हैं । यह कंस बड़ा दुष्ट है । इसे जब मालूम हुआ कि आपका अवतार हमारे घर होने वाला है तो इसने आपके बड़े भाइयों को मार डाला । अभी अपने दूतों से आपके जन्म का समाचार सुनकर वह हाथ में शस्त्र लेकर दौड़ा आएगा और पता नहीं क्या-क्या करेगा ? इधर देवकीजी भी भगवान् की स्तुति करने लगीं – प्रभो ! आपकी माया को कौन जान सकता है ? आप मेरे गर्भ में आये, यह तो आपकी विचित्र लीला है – **'नृलोकस्य विडम्बनम् ।'** आप अपने इस चतुर्भुज रूप को छिपा लीजिये । आपके लिए मैं कंस से बहुत डर रही हूँ । भगवान् ने कहा – स्वायम्भुव मन्वन्तर में जब आपका पहला जन्म हुआ था, उस समय आपका नाम था पृश्नि और वसुदेव का नाम था सुतपा । जब ब्रह्माजी ने आप दोनों को सन्तान उत्पन्न करने की आज्ञा दी, तब आप लोगों ने कठोर तप किया । घोर तप करते-करते दिव्य बारह हजार वर्ष बीत गये । उस समय मैं आप लोगों के सामने इसी रूप से प्रकट हुआ था । मैंने जब आप लोगों से वर माँगने को कहा तो मेरी माया से मोहित होने के कारण आपने मोक्ष नहीं माँगा, मेरे जैसा पुत्र माँगा । तब मैं आप दोनों का पुत्र बना और मेरा नाम हुआ 'पृश्निगर्भ'; दूसरे जन्म में आप लोग अदिति और कश्यप बने, उस समय भी मैं आपका पुत्र बना । मेरा नाम था उपेन्द्र या वामन । तीसरे जन्म में भी मैं अब आपका पुत्र बना हूँ । मैंने आपको अपना यह रूप इसलिए दिखाया, जिससे कि पूर्व जन्मों का आपको स्मरण हो जाए । श्रीशुकदेवजी कहते हैं – इतना कहकर भगवान् चुप हो गये और अपनी माया से उन्होंने एक प्राकृत शिशु का रूप धारण कर लिया और वसुदेवजी से कहा कि आप मुझे गोकुल में पहुँचा दीजिये । वहाँ ब्रज में श्रीजी की छत्रछाया में मुझे कंस से भय नहीं रहेगा ।

श्यामसुन्दर प्रकट लीला में जब गोकुल से नन्दगाँव आ गये तो बरसाने के आसपास कंस नहीं आ सकता था । वसुदेवजी ने भगवान् श्रीकृष्ण की इच्छा से कारागृह के बाहर जाने के बारे में सोचा । उधर यशोदाजी के गर्भ से योगमाया का प्राकट्य हुआ । कंस के सभी द्वारपाल सो गये । ऐसा कैसे हुआ ? विष्णु पुराण में लिखा है – **मोहिताश्चाभवंस्तत्र रक्षिणो योगनिद्रया ।** योगमाया के प्रभाव से सैकड़ों प्रहरी जो हाथों में हथियार लेकर पहरा दे रहे थे, वे सब के सब सो गये । कंस की जेल में बड़े-बड़े द्वार थे, वे दुरत्यय थे । उनके दरवाजे बन्द थे । भागवत के टीकाकार लिखते हैं कि दरवाजे किस प्रकार बन्द थे ? केवल साँकर, कुंडा-ताला से दरवाजे बंद नहीं थे । वे मन्त्र से जकड़े हुए थे । ऐसी विषाक्त औषधियों का उन पर लेप किया गया था कि उनको छूते ही मनुष्य की मृत्यु हो जाती थी । इसीलिए इन्हें दुरत्यय कहा गया । कोई भी सेना अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार से बंदीगृह के दरवाजों को तोड़ नहीं सकती थी । सेना अस्त्र-शस्त्र से लड़ सकती है किन्तु मन्त्र से नहीं लड़ सकती । यह एक विचित्र बात है । कंस ने बड़े-बड़े मन्त्र-तन्त्रों द्वारा कारागार के दरवाजों को बन्द कराकर, उन पर अत्यन्त विषाक्त औषधियों का लेप करवा दिया था । **'मन्त्रौषधादिभिर्दुरत्ययाः सर्वा द्वारश्च बृहत्कपाटायसकीलशृङ्खलैः'** – (श्रीविजयध्वजतीर्थजी)

इसीलिए श्रीभागवत '१०/३/४८' में इन दरवाजों के बारे में लिखा है – **'दुरत्यया ।'** दुरत्यय दरवाजे थे, उनके किवाड़ों को कोई छू भी नहीं सकता था, तोड़ना तो दूर रहा । श्रीकृष्ण ने वसुदेवजी से कहा कि आप कारागृह के बाहर चले जाइये, ये सब दरवाजे अपने-आप खुल जायेंगे । अपनी गोद में श्रीकृष्ण को लेकर वसुदेवजी दरवाजे के पास पहुँचे, वसुदेवजी कैसे हैं तो शुकदेवजी कहते हैं –

'कृष्णवाहे' – जो कृष्ण को ले जा रहे थे । वसुदेवजी कृष्ण को गोद में लेकर जैसे ही दरवाजे के निकट पहुँचे, वैसे ही वे सब दरवाजे, उनके ताले, जंजीरें, किवाड़ें आदि अपने आप ही खुल गये । बड़े-बड़े मन्त्र-तन्त्र, कवच और विषाक्त औषधियों का प्रभाव समाप्त हो गया, जैसे सूर्योदय होने पर अन्धकार स्वयं ही हट जाता है । सूर्यदेव अन्धकार को हटाने के लिए बुहारी नहीं लगाते हैं । उसी समय वर्षा होने लगी । क्यों होने लगी ? योगमाया ने ऐसा नाटक इसलिए रचा, जिससे कि वर्षा के कारण कोई घर के बाहर न जाए, किसी को पता न लग जाए कि वसुदेवजी अपने बालक को लेकर कहीं और रख आये । परन्तु भगवान् शेषजी अपने सहस्त्र फनों से भगवान् के ऊपर छाया करते हुए, वर्षा के जल से उनको बचाते हुए उनके पीछे-पीछे चलने लगे । बड़े जोर से वर्षा हो रही थी । यमुनाजी यमानुजा (यमराज की बहन) के स्वरूप में आ गयी थीं, उनके जल में भयंकर बाढ़ आ रही थी । विष्णुपुराण में लिखा है –

'वर्षतां जलदानां च तोयमत्युल्बणं निशि ।'

वर्षा भी साधारण नहीं हो रही थी, मूसलाधार वर्षा, जिसमें जल की मोटी-मोटी धाराएँ तीव्र वेग से गिर रही थीं । इस भयंकर वर्षा के कारण घर से बाहर निकलना तो दूर, कोई अपनी खिड़की से भी बाहर नहीं झाँक सका । यमुनाजी में सैकड़ों भयानक भँवर पड़ रहे थे । ऐसे में शेषजी अपने फनों के द्वारा वर्षा के जल से प्रभु को बचाते हुए उनके पीछे-पीछे चल रहे थे, साथ ही वसुदेवजी को भी उन्होंने अपने फनों की छाया से ढक रखा था । भयंकर वर्षा की एक बूँद भी भगवान् और वसुदेवजी के ऊपर नहीं पड़ी । यमुनाजी में इतने भीषण वेग से जल प्रवाहित हो रहा था कि हाथी भी बह जाये । यमुना की लहरों के फेन में झाग इस प्रकार निकल रहा था जैसे दूध में उबाल आ रहा हो । झाग ऊपर तक जा रहे थे । इसीलिए श्लोक '१०/३/५०' में यमुना को 'यमानुजा' अर्थात् यमराज की बहन की संज्ञा दी गयी है किन्तु जिस प्रकार समुद्र ने भगवान् राम को मार्ग दे दिया, उसी प्रकार यमुनाजी ने भी वसुदेवजी को मार्ग दे दिया । ब्रजवासी ऐसा कहते हैं कि भयंकर लहरों के माध्यम से यमुनाजी श्रीकृष्ण का चरण स्पर्श करना चाह रही थीं । जब यमुनाजी का जल ऊपर बढ़ने लगा तो वसुदेवजी घबरा गये और समझ गये कि अब तो मैं डूब जाऊँगा किन्तु यमुनाजी नहीं मान रही थीं, वे कह रही थीं कि मेरे कान्त मेरे जल के ऊपर से होकर जा रहे हैं तो मैं इनका चरण तो अवश्य ही स्पर्श करूँगी । यह स्वाभाविक भी है क्योंकि प्रभु आयें और उनका चरण स्पर्श न करे, ऐसा कौन है ? यमुनाजी श्रीकृष्ण चरण स्पर्श करने के लिए जोर से उछलीं तो वसुदेवजी को लगा कि अब तो मैं और मेरा बालक दोनों ही डूब जायेंगे तो वे जोर से चिल्लाये – 'कोई ले, कोई ले' अर्थात् कोई मेरे बालक को बचा ले । वसुदेवजी के इस प्रकार 'कोई ले' कहने से वहाँ यमुना तट पर 'कोयलो' नामक एक गाँव बस गया है । यमुनाजी के किनारे एक छोटा-सा मन्दिर है । उसमें बालकृष्ण को ले जाते हुए वसुदेवजी की प्रतिमा है ।

(श्रीबाबा – एक बार ब्रज परिक्रमा करते समय मैं भी उस स्थान पर पहुँचा और रात को सो गया तो बहुत सुन्दर स्वप्न दिखाई पड़ा । स्वप्न में मुझे यमुनाजी का दर्शन हुआ । यह लीला स्थल का प्रभाव है । स्वप्न में यमुनाजी का बहुत बड़ा वेग दिखाई दिया, जबकि उस समय गर्मियों का मौसम था, यमुनाजी में अधिक जल नहीं था । स्वप्न देखकर मैंने विचार किया कि यह वही स्थान है, जहाँ यमुनाजी श्रीकृष्ण चरण स्पर्श के लिए बड़े वेग से ऊपर उठी थीं और अपने बालक को बचाने के लिए वसुदेवजी – 'कोई लो, कोई लो' कहकर चिल्लाये थे । यमुनाजी ने मुझ पर दया करके इस तरह स्वप्न में दर्शन दिया ।)

यमुनाजी के जल को ऊपर उठते देख श्यामसुन्दर समझ गये कि ये बिना मेरे चरण स्पर्श किये नहीं मानेंगी और मेरे पिता वसुदेवजी घबरा रहे हैं तो उन्होंने अपने चरण नीचे लटका दिए और यमुनाजी ने प्रभु के चरण स्पर्श कर लिए और फिर – **'मार्गं ददौ सिन्धुरिव श्रियः पतेः'** (श्रीभागवतजी १०/३/५०) जैसे सीतापति भगवान् श्रीराम को समुद्र ने मार्ग दे दिया था, वैसे ही यमुनाजी ने भी प्रभु को मार्ग दे दिया । इसके बाद वसुदेवजी नन्दबाबा के गोकुल में पहुँचे तो देखा कि वहाँ सभी लोग गहरी निद्रा में अचेत पड़े हुए हैं । उन्होंने यशोदाजी की शैय्या पर अपने बालक को लिटा दिया और यशोदाजी की कन्या को लेकर मथुरा

के बंदीगृह में लौट आये । जेल के अन्दर प्रवेश करते ही किवाड़ें अपने आप बंद हो गयीं, ताले लग गये । मन्त्र-तन्त्र और औषधियों का उन पर पहले जैसा प्रभाव हो गया । वसुदेवजी के बंदीगृह के भीतर प्रवेश करने और दरवाजों के अपने आप बंद होने के बाद द्वारपालों की नींद टूटी और वे खड़े हो गये । उनको यह पता ही नहीं पड़ा कि हम लोग कब सोये और वसुदेवजी कब बाहर निकले व भीतर आ गये । वे तो यही सोच रहे थे कि हम लोग बहुत बढ़िया पहरा दे रहे हैं और मक्खी तक जेल के भीतर नहीं घुस सकती । द्वारपाल अपने हाथों में हथियार लेकर आवाज लगाने लगे – 'सावधान, होशियार ।' इसके बाद वसुदेवजी के द्वारा लायी हुई बालिका बड़े जोर से रोने लगी । उसके रोने की ध्वनि सुनकर द्वारपाल दौड़कर कंस के पास गये क्योंकि कंस ने उन्हें आज्ञा दे रखी थी कि जैसे ही शिशु का जन्म हो तुरंत उसी समय मुझे खबर करना, नहीं तो सबका सिर काट दिया जायेगा । इसीलिए द्वारपालों ने कंस से कहा – 'महाराज ! सावधान हो जाइये, आपके काल ने जन्म ले लिया है ।' कंस को नींद तो नहीं आ रही थी, वह तो इसी बात की प्रतीक्षा कर रहा था । बालक के जन्म का समाचार पाते ही वह बड़े जोर से कारागृह की ओर चला । हड़बड़ाहट में वह धरती पर गिर पड़ा, उसके बाल बिखर गये । शीघ्रता से वह देवकीजी के पास पहुँचा । उसे देखकर देवकीजी ने कहा – 'भैया ! यह तो कन्या है, तुम्हारी पुत्रवधू के समान है । तुमने मेरे सभी बालक मार डाले । अब केवल यही एक कन्या बची है, इसे तो मुझे दे दो ।' श्रीशुकदेव जी कहते हैं – देवकीजी ने कन्या को अपनी गोद में चिपका लिया और बड़ी ही दीनता के साथ रोते हुए उन्होंने कंस से उस कन्या को छोड़ देने की प्रार्थना की किन्तु कंस बड़ा दुष्ट था । उसने देवकी को झिड़ककर उनके हाथ से वह कन्या छीन ली । उस कन्या के पैर पकड़कर उसने बड़े जोर से एक चट्टान पर उसे दे मारा परन्तु वह कोई साधारण कन्या तो थी नहीं, वह तो देवी थी, वह कंस के हाथ से छूटकर तुरंत ही आकाश में चली गयी । श्रीमद्भागवत में तो इतना ही लिखा है कि वह कन्या कंस के हाथ से छूटकर आकाश में चली गयी किन्तु भविष्योत्तरपुराण में लिखा है –

'कंसासुरस्योत्तमांगे पादं दत्वा गता दिवम् ।'

कन्या ने आकाश में जाते-जाते कंस की खोपड़ी पर इतनी तेजी से अपने पाँव से प्रहार किया कि वह धड़ाम से नीचे गिर पड़ा । जब कंस गिर पड़ा तो वह चारों ओर देखने लगा कि मेरे सिर पर इतनी तेजी से प्रहार किसने किया, यहाँ तो ऐसा कोई मनुष्य है नहीं, जो मेरे भय से मेरे सामने अपना सिर भी उठा सके तो मुझे मारा किसने ? क्रोध में वह इधर-उधर देखने लगा तो उसकी दृष्टि आकाश पर गयी; उसने देखा कि अष्टभुजा देवी आकाश में खड़ी हैं, उनके हाथों में धनुष, त्रिशूल,बाण,ढाल, तलवार, शंख, चक्र और गदा थे । बड़े-बड़े सिद्ध, चारण, गन्धर्व और अप्सरा देवी माँ की स्तुति कर रहे थे । उस समय देवी ने कंस से कहा – 'अरे मूर्ख ! मुझे मारने से तुझे क्या मिलेगा ? तेरा काल तो पैदा हो चुका है, वह तो तेरा पुराना वैरी है । अब तू व्यर्थ में बालकों की हत्या मत किया कर ।' कंस से इस प्रकार कहकर देवी अन्तर्धान हो गयीं । कंस आँख खोलकर देखता ही रह गया कि यह क्या हो गया ? उसको बड़ा आश्चर्य हुआ । उसने उसी समय देवकी और वसुदेव के हथकड़ियों और बेड़ियों को खोला तथा उन्हें कैद से मुक्त कर दिया । उसने मन में सोचा कि मेरा काल तो कहीं और पैदा हुआ है, फिर भी मैंने व्यर्थ देवकी-वसुदेव को कष्ट पहुँचाया । देवताओं ने मुझे खूब मूर्ख बनाया, आकाशवाणी के माध्यम से कहा कि तेरी बहन का आठवाँ गर्भ तुझे मारेगा किन्तु ऐसा तो हुआ नहीं । बड़े ही दुःख की बात है, देवताओं ने मुझे बड़ा धोखा दिया और मैंने अपनी निरपराध बहन के बच्चों को मार डाला । इस तरह मन में दुखी होकर वह देवकी और वसुदेव को ज्ञान देने लगा और बड़ी विनम्रता से बोला – 'अरी बहन और जीजाजी !' (अब वसुदेवजी को जीजाजी कह रहा है क्योंकि उनका साला है । इसीलिए ब्रज में 'साला' शब्द गाली के लिए प्रयुक्त होता है । ब्रजवासी कहते हैं – साला, जाने कहाँ से चला आया ? साला या ब्रज में सारा भी कहते हैं, यह गाली इसीलिए चली है क्योंकि साले के ऐसे ही काम होते हैं । ब्रजवासी किसी पर नाराज होते हैं तो कहते हैं – सारे, दे दऊँगो अभी तोकूँ अर्थात् साले अभी तुझे मारूँगा ।) इसीलिए साला होने के कारण कंस वसुदेव जी से कहता

है – 'अरे जीजाजी, मैं बड़ा पापी हूँ, मैं तो क्रूर असुर हूँ, ब्रह्महत्यारे की तरह मैं जीवित होने पर भी मुर्दा हूँ । ये देवता भी बड़ा झूठ बोलते हैं, केवल मनुष्य ही झूठ नहीं बोलते । उन्हीं पर विश्वास करके मैंने अपनी बहिन के बच्चे मार डाले । पता नहीं, अब मुझे किस लोक में जाना पड़ेगा ? अपने पुत्रों के लिए तुम दोनों शोक मत करो । कोई किसी को दुःख नहीं देता, अपने ही कर्म का फल भोगना पड़ता है । तुम्हारे पुत्रों को भी अपने ही कर्म का फल मिला है । सभी प्राणी सदा एक साथ नहीं रह सकते । वे दैव के अधीन हैं जैसे मिट्टी के बने हुए पदार्थ बनते-बिगड़ते रहते हैं परन्तु मिट्टी में कोई परिवर्तन नहीं होता, वैसे ही शरीर तो पैदा होता और मर जाता है किन्तु आत्मा पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।' इस प्रकार कंस देवकी और वसुदेव को वेदांत की बातें बताकर समझाने लगा । इसके बाद उसने उनके चरण पकड़ लिए और उनसे क्षमा माँगने लगा । उसने उन दोनों को कारागार से छोड़ दिया । देवकीजी ने देखा कि कंस को अपने पापों का पश्चात्ताप हो रहा है तो उन्होंने उसे क्षमा कर दिया – **'क्षान्त्वा रोषं च देवकी ।'** उन्होंने सोचा कि यह मेरा भाई ही तो है और इसकी गलती भी क्या है, यह तो आकाशवाणी की ही गलती थी, जो इसे गलत सूचना दी । श्रीशुकदेवजी कहते हैं – प्रसन्न होकर देवकी-वसुदेव ने निष्कपट भाव से कंस के साथ बातचीत की तब वह उनसे अनुमति लेकर अपने महल में चला गया । रात भर उसे नींद नहीं आई, वह सोचने लगा कि अब समस्या यह आ गयी है कि मेरा काल पैदा हो गया है किन्तु वह कहाँ है, इसका कोई पता नहीं है । सबेरे कंस ने अपने मंत्रियों को बुलाया । उसके बुलाने पर सभी विभागों के बड़े-बड़े मन्त्री आये । देवी ने कंस से जो कुछ कहा था, वह सब उसने अपने मंत्रियों को बताया । दैत्य स्वभाव के वे मन्त्री बोले – 'महाराज ! दस दिन के आगे-पीछे जितने भी बच्चे हुए हों, उन सबको मार डालना चाहिए । उस देवी ने यही तो कहा है कि काल अभी ही पैदा हुआ है तो उसका सीधा उपाय यही है ।' कंस बोला – 'हाँ, ये बात तो सही है ।' मंत्रियों ने कहा – 'आप देवताओं से क्यों आशंकित हैं, ये देवता तो बड़े ही डरपोक हैं । वे तो आपके धनुष की टंकार सुनकर ही घबरा जाते हैं । हमें उनसे कोई भय नहीं है । विष्णु तो एकांत में पड़ा रहता है, शंकर वनवासी है । इन्द्र बेचारे में तो कोई ताकत ही नहीं है, ब्रह्मा बूढ़ा हो चुका है, वह सदा तपस्या करता रहता है । ऐसी स्थिति में युद्ध में आपका सामना करने वाला तो कोई है ही नहीं । फिर भी देवता हमारे शत्रु हैं, इसलिए उनकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए । हमें उनकी जड़ ही उखाड़ फेंकनी चाहिए । देवताओं की जड़ है विष्णु तथा विष्णु की जड़ है सनातन धर्म और सनातन धर्म की जड़ है – वेद, गौ, ब्राह्मण और साधु जो भजन करते हैं । इन्हीं से विष्णु पुष्ट होता है ।'

विप्रा गावश्च वेदाश्च तपः सत्यं दमः शमः ।
श्रद्धा दया तितिक्षा च क्रतवश्च हरेस्तनूः ॥

(श्रीभागवतजी १०/४/४१)

ब्राह्मण, गाय, वेद, तपस्या, सत्य, इन्द्रिय दमन, मनोनिग्रह, श्रद्धा, दया, तितिक्षा और यज्ञ विष्णु के शरीर हैं । इसलिए हम लोग ब्राह्मण, तपस्वी, याज्ञिक और गायों का सब प्रकार से विनाश कर डालेंगे । जब जड़ ही नहीं रहेगी तो पेड़ कहाँ से होगा ? श्रीशुकदेवजी कहते हैं – **'ब्रह्महिंसां हितं मेने'** – (श्रीभागवतजी १०/४/४३) दुष्ट मन्त्रियों की सलाह से कंस की बुद्धि ऐसी विपरीत हो गयी कि उसने हिंसा करना ही ठीक समझा, उसने राक्षसों को संत पुरुषों की हिंसा करने का आदेश दे दिया । इच्छानुसार रूप धारण करने वाले जितने भी असुर थे, वे संसार में सभी को कष्ट देने लगे ।

आयुः श्रियं यशो धर्मं लोकानाशिष एव च ।
हन्ति श्रेयांसि सर्वाणि पुंसो महदतिक्रमः ॥

(श्रीभागवतजी १०/४/४६)

'जो महापुरुषों, भक्तों, साधुओं का अपमान करता है, उसकी आयु, श्री, यश, धर्म, लोक-परलोक, विषय-भोग और कल्याण के सब साधन नष्ट हो जाते हैं ।' कंस और उसके अनुयायी असुर संतों-महापुरुषों का अनिष्ट करने में लग गये, इसलिए उनका शीघ्र ही नाश होगा । उनकी मृत्यु समीप ही आ गयी थी, इसीलिए उन्होंने सन्तों से द्वेष किया ।

वसुदेवनन्दन 'नन्दनन्दन' में विलीन

श्रीशुकदेवजी कहते हैं – (श्रीभागवतजी १०/५/१)

नन्दस्त्वात्मज उत्पन्ने जाताह्लादो महामनाः ।
आहूय विप्रान् वेदज्ञान् स्नातः शुचिरलङ्कृतः ॥

नन्दबाबा पुत्र का जन्म होने पर आनन्द से भर गये । उन्होंने स्नान करके वस्त्राभूषण धारण किये तथा वेदों के जानकार ब्राह्मणों को बुलाया । यह पहले ही बताया जा चुका है कि श्रीकृष्ण के परबाबा देवमीढ़जी से दो शाखायें हो जाती हैं । देवमीढ़जी की दो पत्नियाँ थीं । उनकी एक पत्नी तो क्षत्राणी थी और दूसरी पत्नी वैश्यानी (वैश्य कन्या) थी । क्षत्राणी स्त्री से तो शूरसेनजी उत्पन्न हुए और वैश्य स्त्री से परजन्यजी का जन्म हुआ । इसको ऐसे समझो कि वसुदेवजी के पिता और नन्दबाबा के पिता सौतेले भाई थे । शूरसेन के पुत्र हुए वसुदेव तथा परजन्य के पुत्र हुए नन्दबाबा । ये भी भाई-भाई हुए । जब दोनों के पिता आपस में भाई थे तो उनके पुत्र भी भाई कहलायेंगे । वसुदेव के भी पुत्र कृष्ण थे और नन्दबाबा के भी पुत्र कृष्ण थे । महापुरुषों के पदों में कहीं-कहीं तो ऐसा वर्णन मिलता है कि नन्दबाबा पाँच भाई थे और कुछ पदों में ऐसा वर्णन मिलता है कि नन्दबाबा आपस में नौ भाई थे । दोनों प्रकार के पद मिलते हैं । परजन्यजी की भी दो पत्नियाँ थीं । एक पत्नी के पाँच पुत्र थे और दूसरी पत्नी के चार पुत्र थे । नन्दबाबा की माता वरीयसी जी के पाँच पुत्र थे – उपनन्द, नन्द, अभिनन्द, सुनन्द और नन्दन । इनके अतिरिक्त परजन्य जी की दूसरी पत्नी के चार पुत्र अलग थे । ये सब मिलाकर नौ नन्द हुए, इन नौ नन्दों में नन्दबाबा सबसे अधिक बड़भागी थे क्योंकि नन्दबाबा के पिता परजन्यजी पहले सन्तानहीन थे । एक दिन उनके पास नारद जी आये और उनसे परजन्य जी ने उपासना सीखी । नारद जी ने इनसे कहा – 'तुम भगवान् नारायण की उपासना करो तो तुमको शीघ्र ही सन्तान का लाभ होगा ।' इसलिए नारदजी की कृपा से परजन्य जी को शीघ्र ही उपासना में सिद्धि प्राप्त हुई । एक दिन वे भजन करने बैठे थे तो आकाशवाणी हुई कि तुम्हें सन्तान की प्राप्ति होगी । तुम्हारे पाँच पुत्र होंगे, उनमें से एक के साक्षात् परब्रह्म ही पुत्र बनेंगे । इसलिए यह भी एक प्रमाण है कि नन्द जी के घर पुत्र के रूप में श्रीकृष्ण का जन्म हुआ क्योंकि आकाशवाणी मिथ्या नहीं हो सकती, वह भगवद्-वाणी है । इस प्रकार से यह इतिहास महापुरुषों ने लिखा है । नन्दबाबा के घर पुत्र रूप से श्रीकृष्ण का जन्म हुआ, इसके कई प्रमाण हैं । आदिपुराण में ऐसा उल्लेख है –**'नन्दपत्न्यां यशोदायां मिथुनं समजायत ।'** नन्दपत्नी यशोदाजी के केवल कन्या ही नहीं उत्पन्न हुई थी, एक कन्या और एक पुत्र दोनों उत्पन्न हुए थे ।

गोविन्दाख्या पुमान् कन्याह्यम्बिका मथुरां गता ।

जो पुत्र था, वह गोविन्द (नन्दलाला) था और जो कन्या थी, वह मथुरा चली गयी । जब वसुदेवजी 'देवकीनन्दन' को ले आये तो वे नन्दनन्दन में लीन हो गये जैसे बादल में दामिनी (बिजली) लीन हो जाती है और अक्रूरजी के आने पर वसुदेवनन्दन मथुरा और द्वारकालीला करने चले गये । नन्दनन्दन नित्य रूप से ब्रज में लीला करते हैं, प्रकट लीला में अवश्य विरह भी होता है । इसीलिए ब्रजवासी गाते हैं कि श्रीकृष्ण ने यह सौगन्ध ली थी कि मैं ब्रज को छोड़कर कहीं भी नहीं जाऊँगा ।

ब्रजवासी वल्लभ सदा, मेरे जीवन प्राण ।
ब्रज तजि अनत न जाइहौं, मोहे नंदबाबा की आन ॥
'भूतल भार उतारिहौं धरि-धरि रूप अनेक ।'

ऐसा महात्माओं ने लिखा है, यह सब सही है । टीकाकार आचार्यों ने लिखा है कि स्वयं भागवत में ही इसके प्रमाण हैं कि श्रीकृष्ण नन्दबाबा के पुत्र थे जैसे कि श्लोक '१०/५/१' में शुकदेवजी ने कहा **'नन्दस्त्वात्मज'** अर्थात् नन्दस्तु आत्मज – इसमें 'तु' शब्द है, इसका अर्थ हुआ कि नन्द के भी तो पुत्र हुआ । 'तु' माने तो । भागवत में 'तु' का बड़ा महत्व है । जैसे प्रथम स्कन्ध में कहा गया – **'कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्'** (श्रीभागवतजी १/३/२८) भागवत में 'तु' का विशेष प्रयोग है । आचार्य लोग लिखते हैं कि **'नन्दस्त्वात्मज = नन्दस्तु + आत्मज'** 'तु' का तात्पर्य है कि नन्द के घर में भी पुत्रोत्पत्ति हुई है । अब देवकीनन्दन और यशोदानन्दन में अन्तर यह है कि नन्दबाबा के यहाँ पर – **सम्पूर्णवात्सल्यवैशिष्ट्यात्मरत्त्वम् ।**

यशोदानन्दन तो सम्पूर्ण वात्सल्य से युक्त हैं । केवल यहाँ शुद्ध वात्सल्य प्रेम है । नन्द-यशोदा श्रीकृष्ण को केवल अपना पुत्र ही मानते हैं, उनमें भगवद् भाव नहीं रखते हैं किन्तु मथुरा में – **'देवकीवसुदेवयोः ऐश्वर्यज्ञानाच्छन्नम् ।'** देवकी-वसुदेव श्रीकृष्ण को केवल अपना पुत्र ही नहीं मानते हैं, उनको यह भी प्रतीति होती है कि ये भगवान् हैं । अतः यशोदानन्दन और देवकीनन्दन में यह रस-सम्बन्धी अन्तर है । टीकाकार आचार्य कहते हैं कि यदि तुम ऐसा नहीं मानोगे तो भागवत में कई जगह जो शब्द आये हैं – आत्मज(बेटा), वे सब कैसे सच होंगे ? जैसे जब श्रीकृष्ण के नामकरण संस्कार के अवसर पर गर्गाचार्य जी आये तो उन्होंने कहा – **'प्रागयं वसुदेवस्य क्वचिज्जातस्तवात्मजः'** (श्रीभागवतजी १०/८/१४) उन्होंने यहाँ 'तवात्मज' शब्द कहा है अर्थात् हे नन्दबाबा ! यह जो तुम्हारा निजी (तुम्हारे द्वारा उत्पन्न) पुत्र है, यह कभी पहले वसुदेवजी के यहाँ उत्पन्न हो चुका है । इसी प्रकार ब्रह्ममोह-लीला में ब्रह्माजी गोपालजी की स्तुति में कहते हैं – **नौमीड्य तेऽभ्रवपुषे**.....।

इस श्लोक में अन्त में ब्रह्माजी ने श्रीकृष्ण को पशुपाङ्गज कहा है । ब्रह्माजी की बात झूठी नहीं हो सकती । पशुप किसे कहते हैं ? पशुप माने ग्वारिया नन्दबाबा । **'पशुः पालयति इति पशुपः'** – जो पशुओं का पालन करता है, उसे पशुप कहते हैं । नन्दबाबा गायों का पालन करते थे, इसलिए उन्हें पशुप कहा गया । यदि यह कहा जाए कि वसुदेवजी अपने पुत्र को यशोदाजी के पास लिटा आये, इसलिए वे नन्द-यशोदा के पुत्र भी कहलाये तो नहीं, ब्रह्माजी कहते हैं – पशुपाङ्गज – 'पशुप' अर्थात् नन्दबाबा के अंगज हैं 'श्रीकृष्ण' । 'अंगज' अर्थात् नन्दबाबा के अंग से उत्पन्न हैं । यह बात बहुत ध्यान से समझने योग्य है । इसे केवल आचार्यों ने ही लिखा है, हम लोग इसे सामान्य तरीके से नहीं जान सकते हैं । यह रहस्य तो आचार्यों ने ही खोला है । इसलिए जब ब्रह्माजी ने गोपाल को 'पशुपाङ्गजाय' कहा अर्थात् वे नन्द के अंग से उत्पन्न हैं । इसका मतलब यही है कि नन्द-यशोदा के अंग से उत्पन्न हुए बालक हैं, तभी तो अंगज कहा जायेगा । अगर श्यामसुंदर वसुदेव के पुत्र होते, जैसा कि दुनिया के लोग यही जानते हैं कि वसुदेवजी अपने बालक को नन्दबाबा के घर में लिटा आये अर्थात् यही कृष्ण केवल वसुदेवजी के ही पुत्र होते तो ब्रह्माजी उन्हें 'पशुपाङ्गज' अर्थात् नन्दबाबा के अंगज क्यों कहते, अंगज का अर्थ हुआ कि नन्द-यशोदा के शरीर से उत्पन्न हुए । इसका आशय यही हुआ कि यशोदाजी के भी एक बालक उत्पन्न हुआ था, उसी में वसुदेव के पुत्र आकर लीन हो गये । भागवत में ऊखल बन्धन लीला के प्रसंग में भी शुकदेवजी ने कहा है – **'नायं सुखापो भगवान् देहिनां गोपिकासुतः ।'** (श्रीभागवतजी १०/९/२१) यह गोपिका-सुत है; 'सुत' उसे कहते हैं, जिसे माता प्रसव के द्वारा उत्पन्न करती है । 'गोपिका-सुत' का अर्थ हुआ कि गोपी यशोदा ने इसे प्रसव के द्वारा जन्म दिया है । जब गोपी यशोदाजी कन्हैया को जन्म देंगी तभी तो वे गोपिकसुत कहे जायेंगे । इसी प्रकार जब कंस के हाथ से छूटकर बालिका आकाश में चली गयी तो उसके बारे में शुकदेवजी ने कहा – **'अदृश्यतानुजा विष्णोः'** – (श्रीभागवतजी १०/४/९) यह विष्णु (कृष्ण) की अनुजा है अर्थात् वह नन्दलाला की अनुजा थी, 'अनुजा' माने पीछे पैदा होने वाली उसी गर्भ से । एक ही माता के गर्भ से जो पहले पैदा होता है, उसे 'अग्रज' कहते हैं और जो बाद में पैदा होता है, उसे 'अनुज' कहते हैं । **'अग्रं जायते अग्रजः पश्चात् जायते अनुजः'** स्त्रीलिंग में – **'पश्चात् जायते अनुजा सा'** – अतः नन्दलाला के साथ कोई कन्या भी हुई, तभी तो उसे अनुजा कहा जायेगा।

परमाद्भुत करुणामयी ब्रजेश्वरी 'श्रीराधारानी' की अहैतुकी अनन्त करुणा के परिणामस्वरूप उनके नित्य धाम 'गोलोक' से इस धराधाम पर 'ब्रजभूमि' का अवतरण हुआ । इसी ब्रज में पाँच कोस का वृन्दावन, गिरिराज गोवर्धन एवं यमुनाजी हैं । परम वात्सल्यमयी श्रीजी ने गोलोक धाम से अपने ब्रज-वृन्दावन धाम को पृथ्वी पर इसलिए भेजा ताकि मृत्युलोक के अत्यधिक पतित-पामर एवं दुराचारी प्राणियों का भी इसके आश्रय से सहजता से एवं शीघ्रतापूर्वक कल्याण हो जाए और इन सभी को नित्य धाम की प्राप्ति हो जाए ।

श्रीनन्द-महोत्सव

अगर 'कृष्ण' वसुदेव के पुत्र होते और यशोदाजी के केवल कन्या पैदा होती तो वह 'कन्या' कृष्ण की अनुजा नहीं हो सकती । क्योंकि यशोदा की कूँख दूसरी है और देवकी की भी कूँख अलग है । अतः यशोदाजी की कूँख से जो कन्या हुई, वह देवकी जी की कूँख से उत्पन्न होने वाले देवकीनन्दन कृष्ण की अनुजा कैसे हो सकती है ? यह प्रमाण भी भागवत के टीकाकार आचार्यों ने दिया है । रसिक महापुरुष भी लिखते हैं जैसा कि व्यासजी ने लिखा – **जद्यपि कान्ह कुँवर की भगिनी, यशुदा माँ ने जाई ।** कान्ह कुँवर की भगिनी अर्थात् सगी बहन है, उसे यशोदा माँ ने पैदा किया है । इसका मतलब यह हुआ कि यशोदा मैया ने एक पुत्र भी पैदा किया और एक कन्या को भी जन्म दिया । इसीलिए व्यास जी कहते हैं कि योगमाया रूपी कृष्ण की बहन अपने भतीजों अर्थात् भगवान् के भक्तों, साधु-संतों को बहुत धन देती है । उनको बहुत प्यार करती है । एक और बहुत अच्छी बात आचार्यों ने लिखी है कि वास्तव में जो पुत्र हुआ, वह यशोदाजी के हुआ । आचार्य लोग लिखते हैं – **'भावं विना पुत्रत्वं न ।'** जब तक वात्सल्य-रस नहीं होगा, तब तक पुत्र कैसा ? जैसे भागवत में वर्णन आता है कि 'वराह भगवान्' ब्रह्माजी की नाक से उत्पन्न हुए तो क्या वे ब्रह्माजी के पुत्र कहलाये ? जब हिरण्याक्ष ने पृथ्वी को समुद्र में डाल दिया था और ब्रह्माजी सोच रहे थे कि पृथ्वी को बाहर कैसे निकाला जाये, उसी समय उनकी नाक से एक शूकर निकला और बाहर आकर वह बहुत बड़ा हो गया । क्या वह शूकर ब्रह्माजी का पुत्र बोला गया, उत्तर है नहीं बोला गया । जबकि है बेटा ही क्योंकि वराह जी की स्तुति में उनके लिए 'घ्राणज' शब्द का प्रयोग किया गया है । अतः ब्रह्माजी के अंग से उत्पन्न होने पर भी वराह भगवान् को ब्रह्माजी का पुत्र नहीं कहा गया क्योंकि ब्रह्माजी का उनके प्रति वात्सल्य भाव नहीं था । दूसरी बात, बालक परीक्षित की अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से रक्षा करने के लिए भगवान् उत्तरा के गर्भ में भी गये, फिर उन्हें उत्तरा का पुत्र क्यों नहीं कहा गया ? इसलिए बिना वात्सल्य के कोई बेटा कैसे हो सकता है ?

वाचयित्वा स्वस्त्ययनं जातकर्मात्मजस्य वै ।

(श्रीभागवतजी १०/५/२)

नन्दबाबा ने वेदज्ञ ब्राह्मणों को बुलवाकर स्वस्तिवाचन और अपने पुत्र का जातकर्म संस्कार करवाया । जातकर्म क्या है ? जब बच्चा पैदा होता है तब नालछेदन किया जाता है । नालछेदन के बाद सूतक लगता है । नालछेदन के पहले बहुत दान किया जाता है और वह अक्षय माना जाता है । पुत्र का जन्म होने पर नन्दबाबा ने जातकर्म करवाया अर्थात् नालछेदन के पहले दान किया । नालछेदन के पहले ही जातकर्म किया जाता है । नाल आप्यायनी नाड़ी होती है, माता के गर्भ में बालक को उसके द्वारा ही भोजन का रस मिलता है, जीवन मिलता है । अब यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि यदि यशोदा के पुत्र न उत्पन्न होता तो जातकर्म कैसे किया जाता क्योंकि जातकर्म के बाद ही नाल छेदन किया जाता है और भागवत के इस श्लोक में स्पष्ट कहा गया है कि नन्दबाबा ने जातकर्म करवाया । इसका मतलब है कि यशोदाजी के पुत्र उत्पन्न हुआ क्योंकि जातकर्म के बाद ही तो नाल छेदन होता है । जब तक श्रीकृष्ण यशोदा के गर्भ से नहीं पैदा होते तब तक नाल छेदन कैसे किया जा सकता था, इसलिए भी स्पष्ट है कि यशोदाजी के गर्भ से ही नन्दनन्दन का प्राकट्य हुआ, उसके बाद ही नाल-छेदन किया गया । ब्रज के पुष्टिमार्गीय अष्टछाप के सन्त-कवियों ने भी नन्दलाला की जन्म- लीला का वर्णन किया है, उनका अनुभव भी सत्य है । उन्होंने लीला मन से सोचकर नहीं लिखी । इन्होंने कन्हैया की जन्मलीला को देखा है और देखने के बाद अपने पदों में उसका वर्णन किया है । इन महापुरुषों ने लिखा है कि यशोदाजी से साक्षात् लाला का जन्म हुआ । भागवत में कर्दमजी ने कहा है –

तान्येव तेऽभिरूपाणि रूपाणि भगवंस्तव ।
यानि यानि च रोचन्ते स्वजनानामरूपिणः ॥

(श्रीभागवतजी ३/२४/३१)

हे प्रभो ! आपके भक्तों को आपका जो रूप अच्छा लगता है, वही रूप उपासना के योग्य है ।

इस श्लोक में निर्णय कर दिया गया है । सूरदासजी आदि से बड़ा भक्त और कौन होगा ? उनको नन्दनन्दन रूप अच्छा

लगा तो वह रूप उपास्य है, वह लीला हुई है और उसे अक्षरशः सत्य मानना चाहिए, यह भागवत का प्रमाण है । सूरदासजी ने एक पद लिखा है, नन्दगाँव और बरसाने के समाज में इसे 'दाई के पद' के नाम से गाया जाता है –

पौढ़ी भवन नन्द घरनी जगत जस करनी कृष्ण उर धरनी ।

नन्दरानी यशोदाजी अपने भवन में कृष्ण को गर्भ में धारण करके लेटी हुई हैं अर्थात् कृष्ण यशोदाजी के गर्भ में हैं, वसुदेवजी के द्वारा मथुरा से नहीं लाये गये हैं ।

भाग्य बड़ बरनी अहो सुपने अचरज देखि सखि जगाई ।

यशोदा रानी सपना देख रही हैं और अपनी सखी से कह रही हैं कि पुत्र के पैदा होने का समय आ गया है –

सुन री भटू हितकारी कहा द्यों कहा री,
अहो या सुपनो सखि साँचो उठि आलस छाँड़ ।

यशोदाजी कहती हैं – 'सखि ! यह सच्चा सपना है, तू आलस्य छोड़ दे, मेरे लाला उत्पन्न होने ही वाला है । अब देर नहीं है ।' गोकुल में कोलाहल होने लगा ।

'जगे नर नारी रैन अँधियारी दामिनी कौंधे न्यारी ।' बिजली चमक रही है । **'अहो ऊँचे चढ़ि टेरैं, दाई बुलाओ री ।'** लोग कह रहे हैं कि दाई को बुलाओ । **'दाई मन्दिर आई सुकूँख सिरानी ।'** नन्दभवन में दाई आई और उसने यशोदाजी की कूँख मलना शुरू किया । **'भई मन भाई भवन छबि छाई, अहो मिलि दस पाँच गहे री मंगल गाइयो ।'** मन भाई बात होने लगी । सब समझ गये कि बालक का जन्म होने ही वाला है । बात बिलकुल सच है, यशोदाजी का सपना झूठा नहीं है । सबने सोहर (मंगल गीत) गाना शुरू कर दिया ।दाई ने कहा कि बात बिल्कुल सही है, अब बालक का जन्म होने ही वाला है । दाई को पता पड़ जाता है कि बालक कब होने वाला है ? जब बालक का जन्म हुआ तो यशोदाजी को दर्शन बाद में हुआ, पहले दाई को कृष्ण का दर्शन हुआ । **'बोलो कन्हैया लाल की जय ।'**

यह महापुरुषों का अनुभव है । इसको कोई असत्य नहीं कह सकता । जो इसे असत्य कहता है, वह भक्त नहीं है । जो भक्तों-महापुरुषों की वाणी को असत्य बताता है, वह भक्त नहीं है । वह तो श्रद्धाहीन और नास्तिक है ।

अस्तु, दाई ने कन्हैया का पहले दर्शन किया । **'तेई छिन ऊग्यो है चन्दा अरु प्रगटे नंदनन्दा ।'** उसी समय चन्द्रमा निकला और नन्द के लाला प्रकट हो गये ।

'बोलो नन्द के लाला की जय ।'

नन्द के आनन्द भये जय कन्हैया लाल की ।
हाथी दीने घोड़ा दीने और दीनी पालकी ।
ज्वानन को हाथी घोड़ा बूढ़न को पालकी ।
शाल दिए दुशाला दिए ये भी सवा लाख की ।
ये भी सवा लाख की और वो भी सवा लाख की ।
प्रगटे नन्दनन्दा सकल सुख कन्दा ।

सबको सुख देने वाले नन्दनन्दन प्रकट हो गये ।

तिमिर भयो मन्दा ।
सोवत नन्द जगाये पुत्र ढिंग आये लाल अन्हवाये ।

नन्दबाबा को पुत्र होने का समाचार मिला तो वे दौड़कर आये ... **'परम सचु पाए रतननि खपरा भरायो ।'**

नन्दबाबा ने दाई का खपरा रत्नों से भर दिया । सूरदासजी ने यशोदाजी के नाल-छेदन के बारे में बहुत सुन्दर लीला लिखी है । यशोदाजी दाई से कहती हैं कि नालछेदन कर, तो दाई कहती है –

यशोदा नाल न छेदन दइहौं ।

'यशोदा, मैं नाल छेदने नहीं दूँगी ।' अब दाई के नेग लेने का समय आ गया है ।

मणिमय जटित हार ग्रीवा को,
वहै आज हौं लइहौं ।

दाई कहती है – 'यशोदा ! आज तो मैं तुम्हारा नौलखा हार लेने के बाद ही नाल छेदन करूँगी ।'

बहुत दिनन की आशा लागी झगरन झगरो कीन्हो ।
मन में बिहँसि तबै नन्दरानी हार हिये को दीन्हो ।

यशोदाजी ने कहा – 'तू नाल छेदन कर । ले, तू हार ही तो लेगी और क्या करेगी ? बड़ी कठिनाई से तो मेरे लाला हुआ है ।' कन्हैयाजी पालने में पड़े हैं और इधर दाई झगड़ा कर रही है कि पहले मैं हार लूँगी, तब नाल छेदन करूँगी । सूरदास जी कहते हैं –

जाकी नाल आदि ब्रह्मादिक सकल विश्व आधार ।

श्रीरूपगोस्वामीजी ने भक्तिरसामृतसिन्धु में लिखा है कि कृष्ण भक्ति के चौंसठ अंगों में भी पाँच अंग मुख्य हैं यथा –
नाम जप या कीर्तन, भागवत श्रवण, श्रीविग्रह की सेवा-पूजा, साधु संग और ब्रजवास ।

जिस भगवान् की नाभि से कमल पैदा होता है और जिससे सारे विश्व की सृष्टि होती है । सारा संसार जिस भगवान् की नाभि के नाल से प्रकट होता है,

सूरदास प्रभु गोकुल प्रगटे मेटन को भुवि भार ।

आज वही भगवान् यशोदाजी की नाल में बँधे हुए पड़े हैं । दाई कहती है कि मैं नाल नहीं छेदूँगी, पहले मुझे हार दो । यह महापुरुषों का अनुभव है कि वास्तव में यशोदाजी के गर्भ से लाला का जन्म हुआ । यदि यशोदा के द्वारा पुत्र न उत्पन्न होता तो महापुरुष इस लीला को कैसे गाते ? इस प्रकार पुराणों के आधार पर, श्रीमद्भागवत पर आचार्यों की टीका के द्वारा तथा ब्रज के रसिक महापुरुषों की वाणी के द्वारा इस बात को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया कि वास्तव में यशोदाजी के गर्भ से पुत्र का जन्म हुआ था । इन सब प्रमाणों को कोई गलत नहीं बता सकता । इन सब प्रमाणों से यही सिद्ध होता है कि सच में यशोदाजी से पुत्र का जन्म हुआ और उस नन्दनन्दन में वसुदेवनन्दन आकर लीन हो गये । यहाँ तो बहुत संक्षेप में वर्णन किया गया, नहीं तो प्रमाण तो बहुत से हैं ।

नन्दस्त्वात्मज उत्पन्ने जाताह्लादो महामनाः ।
आहूय विप्रान् वेदज्ञान् स्नातः शुचिरलङ्कृतः ॥

(श्रीभागवतजी १०/५/१)

इस प्रकार नन्दजी के वास्तव में आत्मज (पुत्र) का जन्म हुआ । नन्दजी को बहुत आनन्द हुआ, वे बड़े ही उदार थे; उन्होंने स्नान किया और सुन्दर-सुन्दर वस्त्राभूषण धारण किये । इसके बाद नन्दबाबा ने ब्राह्मणों को बुलवाया ।

वाचयित्वा स्वस्त्ययनं जातकर्मात्मजस्य वै ।
कारयामास विधिवत् पितृदेवार्चनं तथा ॥

(श्रीभागवतजी १०/५/२)

नन्दबाबा ने ब्राह्मणों से कहा कि आप लोग मन्त्रों का उच्चारण करिये । ब्राह्मण लोग नन्द के लाला को आशीर्वाद देने लगे, स्वस्तिवाचन करने लग गये । भगवान् श्यामसुन्दर के अनेक रूप हैं । गर्गाचार्यजी ने भी कहा कि यह केवल वसुदेव का ही पुत्र नहीं है ।

बहूनि सन्ति नामानि रूपाणि च सुतस्य ते ।

(श्रीभागवतजी - १०/८/१५)

नन्दबाबा जी, तुम्हारे पुत्र के अनेक नाम और अनेक रूप हैं । इसलिए इन सब बातों से सिद्ध होता है कि यशोदाजी के पुत्र का जन्म हुआ था ।

'नन्दस्त्वात्मज = नन्दस्तु आत्मज'

आचार्यों ने बताया है कि यदि यहाँ 'तु' न लगाते तब भी श्लोक की पादपूर्ति हो जाती परन्तु बिना 'तु' के श्लोक की पादपूर्ति होने पर भी 'तु' लगाया गया तो इससे पता पड़ता है कि वसुदेवनन्दन के होते हुए भी नन्दनन्दन उत्पन्न हुए । यह 'तु' शब्द का अर्थ है । इसके अतिरिक्त इस श्लोक में प्रयुक्त शब्द 'जाताह्लादो' का अर्थ आचार्यों ने किया है कि नन्दजी के केवल पुत्र ही पैदा नहीं हुआ बल्कि आह्लाद (आनन्द) भी पैदा हुआ अर्थात् यहाँ वात्सल्य-रस से युक्त भगवान् पैदा हुए । नन्दबाबा ने ब्राह्मणों के द्वारा अपने पुत्र का विधिवत् जातकर्म संस्कार करवाया । पितरों के लिए श्राद्ध किया गया, देवताओं की भी पूजा करवाई । नान्दीश्राद्ध भी किया । लाला को घी मिश्रित मधु चटाया गया । नन्दबाबा ने ब्राह्मणों को दो लाख गायें दान कीं । रत्नों से मिले हुए तथा सोने के वस्त्रों से ढके हुए तिल के सात पहाड़ दान किये । तिल के सात पहाड़ क्यों बनाये जाते हैं ? ऐसा करने से सुमेरु पर्वत के दान के समान फल मिलता है । सुमेरु आदि पर्वतों के भाव से यह दान किया जाता है । नन्दबाबा ने ब्राह्मणों को अनेक प्रकार के दान दिए क्योंकि द्रव्य की शुद्धि दान से होती है । यहाँ शुद्धि के बहुत से उपाय बताये गये हैं जैसे समय से भूमि आदि, स्नान से शरीर आदि, संस्कारों से गर्भादि, संतोष से मन आदि । इस तरह अनेक तरह की शुद्धि यहाँ बताई गयी है । ब्राह्मण लोग मंगलमय वाणी बोलने लगे । सूत, मागध और वन्दीजन आये । सूत पुराणों का गायन करते हैं, मागध वंशावली गाते हैं, वन्दी वे होते हैं, जो समय के अनुसार स्तुति करते हैं । गायक लोग गाने लगे । भेरी और दुन्दुभियाँ बिना बजाये अपने आप बजने लगीं । भेरी तो उत्सवों पर बजती है तथा दुन्दुभियाँ मंगलमय अवसर पर बजती हैं । सारे ब्रजमण्डल को अच्छी तरह झाड़ा-बुहारा गया, इत्र से सींचा गया । सभी घरों के द्वार, आँगन और घर के कोने-कोने अच्छी तरह पिचकारियों द्वारा सींचे गये । अनेकों प्रकार की ध्वजा-पताका, पुष्पों की माला,

तोरनवार, आम के पल्लव आदि बाँधे गये । गाय, बैल और बछड़ों के अंगों में हल्दी-तेल का लेप किया गया, उन्हें अनेक प्रकार की सोने की मालायें पहनायीं गयीं । इतना सोना ब्रज में कहाँ से आ गया ? भगवान् जब से ब्रज में आये, तभी से समस्त ऋद्धि-सिद्धि और सम्पत्तियाँ ब्रज में विचरण करने लगीं । सभी गोप सुन्दर-सुन्दर कंचुक, पाग, आभूषण आदि से सजकर तथा लाला के लिए भेंट लेकर नन्दबाबा के घर आये । गोपियाँ भी सुन्दर साड़ी और आभूषणों को पहनकर आयीं । ब्रजदेवियों ने अपने मुख पर कुंकुम का लेप किया और भेंट की सामग्री लेकर जल्दी-जल्दी नन्दभवन की ओर चलीं ।

नवकुङ्कुमकिञ्जल्कमुखपङ्कजभूतयः ।
बलिभिस्त्वरितं जग्मुः पृथुश्रोण्यश्चलत्कुचाः ॥

(श्रीभागवतजी - १०/५/१०)

उनके नितम्ब स्थूल थे और स्तन हिल रहे थे । इसका भाव यह है कि स्थूल नितम्ब और स्तनों के कारण जल्दी चलने में कष्ट होता है परन्तु आनन्द के कारण सभी ब्रजदेवियाँ जल्दी-जल्दी नन्द लाला के दर्शन के लिए चली जा रही थीं ।

गोप्यः सुमृष्टमणिकुण्डलनिष्ककण्ठय -
श्चित्राम्बराः पथि शिखाच्युतमाल्यवर्षाः ।

गोपियों के कानों में मणियों के कुण्डल एवं गले में सोने के हार हैं । वे अनेक प्रकार की रंग-बिरंगी साड़ियाँ पहने हैं । चलते समय उनकी चोटियों में गुंथे हुए फूल रास्ते में गिरते जा रहे थे । ब्रजगोपियों की चोटियों से फूल क्यों गिर रहे हैं, इस छटा का बहुत सुन्दर वर्णन नन्ददासजी ने किया है । यह पद नन्दगाँव में गाया जाता है ।

ए हो थकि थकि परत कुसुम सीतन पे
उपमा कौन बखानो ।

गोपियाँ नन्दभवन को जा रही हैं, उनकी चोटियों से फूल गिर रहे हैं, उसकी क्या उपमा दें, मानो जो चरण नन्दभवन में जा रहे हैं, उन पर रीझकर केशपाश फूल बरसा रहे हैं कि धन्य हैं ये चरण, जो आज नन्दभवन में लाला की बधाई देने जा रहे हैं । इस प्रकार गोपिकायें नन्दभवन में जा रही हैं, हाथों में खनखनाते हुए कंकण हैं, कानों के कुण्डल हिल रहे हैं, कुंकुम लगे हुए पयोधर हिल रहे हैं । ये केवल चलने के कारण नहीं हिल रहे हैं, यह हृदय में आनन्द और प्रेम की हिलोर है कि अनादि काल से हम लोग नन्दनन्दन के लिए प्यासे थे, आज वे प्रकट हो गये । (इसलिए हिलकर अपनी प्रसन्नता को प्रकट कर रहे हैं) इस प्रकार नन्द भवन को जाती हुई ब्रजगोपियों की अलौकिक शोभा थी । यशोदा जी के पास जाकर वे नन्दलाला को आशीर्वाद देती थीं – 'यशोदा का लाल चिरजीवी हो ।' ब्रज में लाड़ली-लाल को आशीर्वाद देने की यह सुन्दर प्रथा है । ब्रजवासी होली खेलते हैं तो लाली-लाला को आशीर्वाद देंगे – 'चिर जियो होली के रसिया ।' कोई भी उत्सव हो तो ब्रज में श्यामसुंदर और श्रीजी को आशीर्वाद दिया जाता है । ऐसी परम्परा ब्रज के बाहर और कहीं नहीं है । इसीलिए ब्रजगोपिकाएं नन्द लाला को आशीर्वाद दे रही थीं । वात्सल्य रस में तो आशीर्वाद दिया ही जाता है । श्रृंगार रस में भी सखी-सहचरियाँ श्रीजी-श्यामसुंदर को आशीर्वाद देती हैं, सख्य रस में सखा भी कन्हैया को आशीर्वाद देते हैं । ब्रज में सब कन्हैया को आशीर्वाद देते हैं ।

ता आशिषः प्रयुञ्जानाश्चिरं पाहीति बालके ।
हरिद्राचूर्णतैलाद्भिः सिञ्चन्त्यो जनमुज्जगुः ॥

(श्रीभागवतजी - १०/५/१२)

ब्रजगोपियाँ नन्द भवन में आये लोगों पर हल्दी का चूर्ण, तेल और जल मिलाकर छिड़क देती थीं । ऐसा क्यों ? इसका भाव वल्लभाचार्यजी ने अपनी टीका में लिखा है कि नन्द भवन में सम्बद्ध, असम्बद्ध, उभयविध और अन्य – चार प्रकार की गोपियाँ गयी हैं । वल्लभाचार्यजी लिखते हैं – **'हरिद्राचूर्णयोर्मेलने आरक्तो भवति तैलेन च संपृक्तं न कदापि त्यजति ।'**

हल्दी और चूना मिलाने से लाल रंग हो जाता है और तेल मिलाने से वह छूटता नहीं है । इसमें जल मिलाकर कितना भी फेंको, घटता नहीं है । गोपियाँ बड़ी चतुर हैं, इसीलिए हल्दी, तेल और चूना के साथ जल मिलाकर सभी पर छिड़क रही हैं ।

'श्रीकृष्णावतार' से हुआ सर्वसमृद्धिमय 'ब्रज'

नन्दभवन जाती हुई ब्रजगोपिकाओं के बारे में वल्लभाचार्यजी ने अपनी श्रीमद्भागवत की टीका में बड़े सुन्दर भाव लिखे हैं । जाते समय उनके स्थूल नितम्ब और स्तन हिल रहे हैं तो इसका भाव वे लिखते हैं –

'त्वरागमनन्तासामत्यशक्यम्'

जिनके स्थूल नितम्ब और स्थूल स्तन होते हैं, वे जल्दी नहीं दौड़ सकती हैं ।

'पृथुश्रोण्यश्चलत्कुचाः' (श्रीभागवतजी - १०/५/१०) – इसकी टीका में वल्लभाचार्यजी लिखते हैं –

'पृथुश्रोण्यः चलत् कुचाः अत्युच्चतया कुचयोः चलनं गमनप्रतिबन्धकं भवति ।' ब्रजाङ्गनाओं के बहुत ऊँचे स्तन हैं, वे चलने में बाधा उत्पन्न कर रहे हैं तो वल्लभाचार्यजी आगे लिखते हैं –

'यत्राशक्यं ताः सम्पादयन्ति तत्र शक्ये कः सन्देह ।'

जब कठिन काम भी सरल हो गया है, स्थूल स्तन वाली गोपियाँ भी बड़े तीव्र वेग से नन्दभवन पहुँच गयी हैं तो जो छरहरी गोपियाँ हैं, उनका क्या कहना । ऐसा अद्भुत नन्दोत्सव हुआ कि गोपियाँ कृष्ण के लिए मंगल गीत गा-गाकर सबके ऊपर हल्दी-तेल मिश्रित जल छिड़क रही थीं । बड़े-बड़े मंगलमय और विचित्र बाजे बजाये जाने लगे । चार प्रकार के वाद्य होते हैं – तन्तु, सुषिर, अवनद्ध और घन । श्रीजीवगोस्वामीजी लिखते हैं कि नन्दोत्सव में चारों प्रकार के वाद्य बज रहे हैं, क्यों ? क्योंकि अनन्त जो भगवान् हैं, वे नन्द के ब्रज में आये हैं ।

गोपाः परस्परं हृष्टा दधिक्षीरघृताम्बुभिः ।
आसिञ्चन्तो विलिम्पन्तो नवनीतैश्च चिक्षिपुः ॥

(श्रीभागवतजी - १०/५/१४)

गोपगण बड़े प्रसन्न हो रहे हैं । नन्दभवन में बहुत से सिद्ध गोप आये हैं, जो आयु में बहुत बड़े हैं । मधुमंगल आदि ग्वाल तो आयु में बलराम जी से भी बड़े हैं और श्रीकृष्ण के नित्य सखा हैं । ये समझ गये कि हमारा सखा आ गया है । अतः ये दही, दूध और घी के माट भरकर लाये, कोई-कोई ग्वाल जल के माट लाये क्योंकि ये अलग प्रकार का खेल रचाएंगे । इन ग्वालबालों ने पहले तो दूध, दही और घी के सैकड़ों माटों को एक दूसरे पर उड़ेलकर दूध-दही की होली खेली । इसके बाद **नवनीतैश्च चिक्षिपुः -** माखन की लौनी एक दूसरे के ऊपर गेंद की तरह फेंकने लगे । उन्होंने कहा कि आज नन्द के लाला का जन्म हुआ है तो खूब खेल खेलो, चाहे नन्दबाबा हों, चाहे कोई बड़ा-बूढ़ा हो, सबके ऊपर माखन की लौनी फेंको । भीड़-भाड़ में बड़े-बूढ़े दूर खड़े थे क्योंकि बच्चों के बीच में कौन घुसेगा ? एक बुढ़िया दूर खड़ी होकर देख रही थी, उससे एक गोप ने कहा – 'अरी दादी ! आगे चलकर देख, वहाँ बड़ा आनन्द हो रहा है । वहाँ सभी लोग नाच-गा रहे हैं ।' बुढ़िया बोली – 'अच्छा भैया ।' ऐसा कहने पर उसका मुख खुला तब तक किसी ग्वालबाल ने माखन का लौना फेंका तो वह बुढ़िया के मुख में घुस गया और वह अपना मुँह चलाकर माखन का स्वाद लेने लगी और कहने लगी – 'बड़ा आनन्द है ।' नन्द के आनन्द भयो कहने लगी । इस प्रकार ग्वालबाल एक दूसरे के मुख पर माखन के लौंदे फेंकने लगे । इसके बाद ग्वारिया बोले कि आज कुछ नया कौतुक रचो ।

नन्दबाबा पाँच सगे भाई थे । दूसरे चार भाई सौतेली माता से थे । इस प्रकार ये नौ नन्द थे । इनमें उपनन्द जी सबसे बड़े थे । उनकी पत्नी बड़ी मोटी थीं, स्त्रियों में सबसे अधिक मोटी वे ही थीं और पुरुषों में नन्दजी के छोटे भाई सुनन्दजी सबसे अधिक मोटे थे । सभी ग्वारिया सुनन्दजी से बोले कि बाबा ! आज तो तुम्हें नाचना पड़ेगा । वे बड़े प्रसन्न थे, इसलिए बोले – 'अच्छा भैया ! अवश्य नाचूँगा ।' दूसरी ओर से ग्वारिया उपनन्दजी की पत्नी को ले आये जो सबसे अधिक मोटी थीं । उनसे ग्वारिया बोले – 'दादी ! आज तुझे भी नाचना पड़ेगा ।' वे बोलीं – 'ठीक है, आज मैं भी नाचूँगी ।' अब नन्दबाबा के आँगन में यह तमाशा होने लगा कि ऐसे मोटे स्त्री-पुरुष, जिनको चलना भी मुश्किल, उन्हें नचाने के लिए लाया गया । अब सुनन्दजी और उपनन्दजी की पत्नी का नृत्य आरम्भ हुआ । सुनन्दजी

सबसे मोटे थे, जब उन्होंने ठुमका लगाया तो एक ग्वारिया ने उनके पाँव के नीचे पिघले माखन का चिकना गोला रख दिया । ग्वालबाल बोले – 'अरे बाबा ! जोर से नाचो ।' सुनन्दजी बोले – 'हाँ, जोर से ठुमका मारूँगा ।' जब उन्होंने जोर से ठुमका मारा, तुरन्त ही ग्वारिया ने उनके पाँव के नीचे माखन का गोला रख दिया । जब उनका पाँव उस गोले पर पड़ा तो सुनन्दजी धड़ाम से नीचे गिर पड़े और उनके ऊपर उनके साथ ही नाचती हुई उपनन्दजी की पत्नी भी गिर पड़ीं क्योंकि किसी ग्वारिया ने उनके नितम्ब पर धक्का मार दिया था । अब नीचे तो सु नन्दबाबा और उनके ऊपर उपनन्दजी की पत्नी तथा सब ग्वारिया उनके ऊपर दही और पानी के मटके उड़ेलने लगे और जोर-जोर से कहने लगे – 'नन्द के आनन्द भयो जय कन्हैया लाल की ।' इस प्रकार से ब्रजवासियों ने बड़ी धूमधाम से नन्दोत्सव मनाया ।

नन्दो महामनास्तेभ्यो वासोऽलङ्कारगोधनम् ।
सूतमागधवन्दिभ्यो येऽन्ये विद्योपजीविनः ॥

(श्रीभागवतजी - १०/५/१५)

नन्दबाबा दूर से यह उत्सव देख रहे थे । वे बड़े उदार थे । उन्होंने सबको भेंट दी । सूत-मागध और वन्दी जनों को भी भेंट की वस्तुएं दीं । **'येऽन्ये विद्योपजीविनः'** – अन्य विद्योपजीवियों को भी भेंट दी । आचार्य लोग विद्योपजीवी का अर्थ करते हैं – **'भरतशास्त्रादिविद्ययोपजीवी ।'** 'विद्योपजीवी' का अर्थ है कि नन्दभवन में बहुत से नाटकों का आयोजन किया गया । इन नाटक आदि विद्याओं से जीवन-निर्वाह करने वाले विद्योपजीवियों को भी नन्दबाबा ने उनकी मुँहमाँगी वस्तुयें दीं ।

बाजे बाजे री बधाई मैया तेरे अँगना ।
मात जसोदा लाला जायो, सुनि-सुनि लोग भये मँगना ॥
उमगि-उमगि नन्द दान देत हैं, बाँह भरा बाजूबंद कँगना ।

नन्दबाबा आभूषण लुटा रहे हैं ।

सूरदास आसीष देत हैं, चिरजीवो छँगना-मँगना ॥

सभी लोग आशीर्वाद दे रहे हैं कि नन्द-यशोदा का यह छगन-मगन चिरजीवी हो । नन्दबाबा ने भगवान् विष्णु की आराधना के लिए और अपने पुत्र के अभ्युदय के लिए बहुत सा दान दिया । परन्तु उन्होंने देखा कि रोहिणीजी इस उत्सव में नहीं आयी हैं, उनके बारे में शुकदेवजी ने कहा – **'रोहिणी च महाभागा'** (श्रीभागवतजी - १०/५/१७)

रोहिणीजी महाभाग्यशालिनी थीं क्योंकि वसुदेवजी की जितनी भी पत्नियाँ थीं, उनमें केवल रोहिणीजी को ही ब्रज लीला देखने का अवसर मिला था, इसलिए वे वसुदेवजी की समस्त पत्नियों में सबसे अधिक सौभाग्यशालिनी थीं । जीव गोस्वामीजी अपनी टीका में लिखते हैं कि उनका नाम रोहिणी क्यों पड़ा ? **'रोहयति जनयति व्रजसुखं तत्छीलेति'** जो ब्रजसुख की उत्पत्ति कराती हैं, वे रोहिणी हैं इसलिए श्लोक '१०/५/१७' में उन्हें महाभागा कहा गया है । जीवगोस्वामीजी लिखते हैं –

श्रीवसुदेवपत्नीभ्यः श्रीदेवकीतश्च भाग्यविशेषवती ।

रोहिणीजी देवकीजी से भी अधिक भाग्यशालिनी हैं क्योंकि 'जनयति व्रजसुखम् ।' 'रोहयति' का अर्थ है जनयति अर्थात् जो ब्रजसुख को पैदा करती हैं, 'तत्छीलं यस्याः' ऐसा शील है जिनका ।

रोहिणी च महाभागा नन्दगोपाभिनन्दिता ।
व्यचरद् दिव्यवासःस्रक्कण्ठाभरणभूषिता ॥

(श्रीभागवतजी - १०/५/१७)

इस श्लोक में 'व्यचरद्' क्यों लिखा है तो श्रीजीवगोस्वामीजी लिखते हैं –

स्वगृहान्तःशायितस्य तदीयाभिनवबालकस्यात्रानुक्ति ।

वे अपने पुत्र बलरामजी को भीतर सुला आयी थीं क्योंकि नन्दभवन में बहुत भीड़ थी । 'व्यचरद्' का अर्थ है कि विशेष रूप से नन्दोत्सव में आकर उन्होंने नृत्य किया और गीत गाया । महापुरुष लोग बताते हैं कि परजन्यजी की पुत्रियाँ अर्थात् नन्दबाबा की बहनें नन्दा और सुनन्दा आयीं, उनसे यशोदाजी कहने लगीं –

विपुल बधावो वीर घर,
वीर तुम्हारो देस बटी ।

'हे वीर ! यहाँ किसी वस्तु की कमी नहीं है, कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है । तुम अपने सब नेग करो ।' तब नन्दाजी यशोदाजी से कहती हैं – **'धनि तेरी पटुला माँय ।'**

'भाभी ! तुम्हारी माँ पटुला धन्य है जो उसने तुम्हारे जैसी पुत्री को उत्पन्न किया और जब हमारे पिता परजन्य

बाबा से नन्दजी उत्पन्न हुए तो देवमीढ़ राजा की पुत्री अर्थात् परजन्य की बहिन यानी नन्दबाबा की बुआ को सौ छकड़े साड़ियाँ मिली थीं ।

देवमीढ़ नृप की सुता, लिए हैं सकट सत चीर ।

किन्तु मैं तो उनसे चौगुना लूँगी, तब मेरा नेग पूरा होगा, इसलिए सोच लो ।' यशोदाजी कहती हैं – 'अरे, ये तुमने क्या माँगा ?'

अहो बेटी इतने को कहा माँगनो, ब्रजपति प्रबल प्रकाश ।

तुमने तो बहुत थोड़ा ही माँगा ।

अहो बेटी खोल बड़े नग कोश ।

यशोदा जी ने रत्नों के खजाने खोल दिए कि जितने चाहो उतने रत्न ले लो ।

तत आरभ्य नन्दस्य व्रजः सर्वसमृद्धिमान् ।
हरेर्निवासात्मगुणै रमाक्रीडमभून् नृप ॥

(श्रीभागवतजी - १०/५/१८)

अब कोई सोचे कि ब्रज में इतना अधिक धन कहाँ से आ गया तो उसके उत्तर में इस श्लोक में शुकदेवजी कह रहे हैं – **'नन्दस्य व्रजः सर्वसमृद्धिमान्'**

ब्रज में समस्त ऋद्धियाँ-सिद्धियाँ गली-गली डोलने लगीं । रत्न पड़े रहते थे और कोई ब्रजवासी उन्हें उठाता नहीं था । ऐसा क्यों ?

हरेर्निवासात्मगुणै रमाक्रीडमभून्नृप ।

(श्रीभागवतजी - १०/५/१८)

सर्वप्रियता आदि गुणों के कारण भगवान् का निवास स्थान ब्रज-लक्ष्मी के खेलने का स्थान बन गया था । यहाँ पर कुछ आचार्य अपनी टीका में लिखते हैं कि रमाक्रीडम् का मतलब है कि ब्रज श्रीजी (राधारानी) के खेलने का स्थान बन गया क्योंकि भागवत में आगे के प्रसंग में बताया गया है कि यह तो लक्ष्मीजी के लिए अत्यन्त दुर्लभ वस्तु है ।

'नायं श्रियोऽङ्ग उ नितान्तरतेः प्रसादः'

(श्रीभागवतजी - १०/४७/६०)

इसीलिए ऐसा कहने का अभिप्राय यह है कि जब से श्यामसुन्दर ब्रज में आये, किशोरीजी भी यहाँ खेलने लगीं । 'रमाक्रीडम' का ही विस्तार महापुरुषों ने किया है कि श्रीकृष्ण के जन्मोत्सव पर समस्त रावल अथवा बरसानावासी उमंग के साथ गोकुल गये । वृषभानुबाबा और कीर्ति मैया भी गये तथा नन्दबाबा व यशोदा मैया को कान्हा के जन्म की बधाई दी ।

सब सुख छाये परम धाम ।
सुख धाम श्याम अभिराम जू गोकुल आए,
मिट गये द्वंद्व नन्द दासन के भये सब मंगल काम ।

भगवान् के आने से अनन्त सुख-समृद्धि ब्रज के घर-घर में बिखरी पड़ रही है ।

कुछ दिनों के बाद नन्दबाबा गोकुल की रक्षा में गोपों को नियुक्त करके कंस को कर देने के लिए मथुरा गये । वहाँ जाकर वे वसुदेवजी से मिले । उन्होंने वसुदेवजी का आलिंगन किया, नमस्कार नहीं किया । टीकाकार आचार्य लिखते हैं कि वसुदेवजी आयु में नन्दबाबा से छोटे थे, यद्यपि वर्ण में वसुदेव जी बड़े थे क्योंकि देवमीढ़जी की क्षत्राणी पत्नी से वसुदेवजी का वंश अलग हुआ और देवमीढ़जी की वैश्य स्त्री से नन्दबाबा का वंश अलग हुआ; देवमीढ़जी से वंश अलग हुआ । इस बात को स्मरण रखना चाहिए । उनकी क्षत्रिय पत्नी से शूरसेनजी पैदा हुए तथा वैश्य पत्नी से परजन्यजी हुए । फिर शूरसेन के वसुदेवजी तथा परजन्य के नन्दबाबा हुए । वसुदेवजी क्षत्रिय होने के कारण वैश्य नन्दबाबा से वर्ण में बड़े थे । नन्दबाबा ने अपने वैश्य वर्ण के अनुसार गोपालन किया । किन्तु फिर भी आयु में नन्दबाबा बड़े थे, इसीलिए उन्होंने वसुदेवजी का आलिंगन किया ।

वेद मन्त्र में भी कहा गया है – उत्तिष्ठ जाग्रत ..... उठो, जागो और श्रेष्ठ पुरुषों की शरण में जाओ क्योंकि छुरे की धार पर चलना है । अकेले तुम नहीं चल पाओगे । श्रेष्ठ पुरुषों का सहारा ले लो, तब तुम चल पाओगे, पार उतर जाओगे, नहीं तो गिर जाओगे । यही बात भागवत में भी कही गयी है –'योगेश्वरानुवृत्त्या वा हन्यादशुभदाञ्छनैः' योगेश्वरों की अनुवृत्ति रहेगी तो चल पाओगे, नहीं तो गिर जाओगे ।

सबसे बड़ा संरक्षक 'श्रीनाम-आराधन'

वसुदेवजी ने नन्दबाबा से कहा – 'अरे नन्दजी ! आपको बड़ी अवस्था में पुत्र पैदा हुआ ।'

दिष्ट्या भ्रातः प्रवयस इदानीमप्रजस्य ते ।
प्रजाशाया निवृत्तस्य प्रजा यत् समपद्यत ॥

(श्रीभागवतजी - १०/५/२३)

इस श्लोक में प्रयुक्त शब्द 'प्रवयस' का अर्थ करते हुए ब्रजवासी कहते हैं कि नन्दबाबा पचासी (८५) वर्ष के हो चुके थे, तब पुत्र का जन्म हुआ । यह झूठ नहीं है । 'प्रवयस' का अर्थ है कि नन्दबाबा की आयु बहुत अधिक हो गयी थी, उन्हें सन्तान होने की कोई सम्भावना नहीं थी । भगवान् की आराधना और कृपा से उन्हें पुत्र प्राप्ति हुई । वसुदेवजी ने उनसे यहाँ तक कहा कि – **'प्रजाशाया निवृत्तस्य'** – आपको सन्तान की आशा हट गयी थी ।

स्त्रियों को जब तक मासिक धर्म होता है तभी तक सन्तान की आशा रहती है । मासिक धर्म बन्द होने के बाद सन्तान की आशा हट जाती है ।

कुछ आचार्य लोग लिखते हैं कि बिलकुल अनहोनी बात हुई – **'प्रजाशाया निवृत्तस्य'** आशा भी हट गयी कि इतनी अधिक अवस्था में अब सन्तान नहीं होगी ।

इसलिए ब्रजवासियों ने नन्दबाबा से कहा – 'बाबा ! तेरी पचासी वर्ष की आयु में बेटा हुआ ।' तो यह बात सही है । इसके बाद वसुदेवजी ने कहा कि मेरा पुत्र बलराम आपको ही अपना पिता मानता होगा ।

दाऊजी के जन्म के विषय में भी मतभेद है । कुछ आचार्य ऐसा मानते हैं कि दाऊजी का जन्म मार्गशीर्ष शुक्ल पंचमी को हुआ था । जीव गोस्वामीजी का मत है कि बलरामजी श्रीकृष्ण से आठ महीने बड़े थे । कुछ आचार्य ऐसा मानते हैं कि भाद्रपद शुक्ल पक्ष की षष्ठी तिथि में बुधवार को दोपहर में बलरामजी का जन्म हुआ । इस हिसाब से ये श्रीकृष्ण से साढ़े ग्यारह महीने बड़े हैं । एक मत से बलरामजी आठ महीने बड़े तथा दूसरे मत से साढ़े ग्यारह महीने बड़े हैं । कुछ आचार्य जैसे चाचा वृन्दावनदासजी के अनुसार श्रावण शुक्ल पंचमी (जिसे नाग पंचमी भी कहते हैं) को बलरामजी का प्राकट्य हुआ था । इस तरह देखा जाये तो हर स्थिति में बलदाऊजी आयु में श्रीकृष्ण से बड़े हैं ।नन्दबाबा ने वसुदेवजीसे कहा कि तुम्हारे कई पुत्र कंस ने मार डाले । इस प्रकार बातचीत करने के बाद वसुदेवजी ने नन्दबाबा से कहा कि आपने अपना वार्षिक कर कंस को दे दिया । अब आप शीघ्र ही गोकुल चले जाइये क्योंकि वहाँ उत्पात होने की सम्भावना है ।

श्रीशुकदेवजी कहते हैं – वसुदेवजी की बात सुनकर नन्दबाबा गोकुल की ओर चल दिए ।

श्रीशुकदेवजी कहते हैं – जब नन्दबाबा मथुरा से गोकुल की ओर जा रहे थे तो रास्ते में वे विचार करने लगे कि वसुदेवजी की बात झूठी नहीं हो सकती, इसलिए वे उत्पात होने की आशंका से मन ही मन भगवान् की शरण में गये ।

इधर कंस ने पूतना नाम की राक्षसी को गोकुल भेजा । वह बालघातिनी थी । उसको कंस ने आदेश दिया था कि आजकल थोड़े समय में जितने भी बच्चे पैदा हुए हैं, उन सबको समाप्त कर दो । शुकदेवजी कहते हैं कि ऐसी राक्षसियों का बल कहाँ चलता है ?

न यत्र श्रवणादीनि रक्षोघ्नानि स्वकर्मसु ।
कुर्वन्ति सात्वतां भर्तुः यातुधान्यश्च तत्र हि ॥

(श्रीभागवतजी - १०/६/३)

इस श्लोक में प्रयुक्त शब्द 'सात्वत' का अर्थ श्रीधरस्वामीजी ने दिया है – कृष्ण नाम - जहाँ पर कृष्ण नाम का श्रवण और कीर्तन नहीं किया जाता अर्थात् जिस घर में नित्य कृष्ण नाम का श्रवण और कीर्तन नहीं किया जाता है, वहाँ भूत-प्रेत आदि की बाधायें आती हैं । सबसे बड़ा कवच यही है कि सभी लोग कृष्ण नाम का कीर्तन करो । जहाँ पर कृष्ण नाम का कीर्तन नहीं किया जाता है, वहाँ पर भूत-प्रेत आदि बाधा देते हैं । इसलिए सबके घरों में कृष्ण नाम कीर्तन गुंजरित होना चाहिए, कृष्ण नाम की झनकार होनी चाहिए । ये महापुरुष लोग हमारे कल्याण के लिए ऐसा लिख गये हैं ।

सा खेचर्येकदोपेत्य पूतना नन्दगोकुलम् ।
योषित्वा माययाऽऽत्मानं प्राविशत् कामचारिणी ॥

(श्रीभागवतजी - १०/६/४)

वह पूतना एक बार आकाश मार्ग से उड़कर गोकुल में आई । 'एकदा' का अर्थ आचार्यों ने लिखा है कि वह रात में उड़कर आयी । वह इच्छानुसार रूप धारण करने वाली थी, उसने बड़ा ही सुन्दर रूप बना लिया । वह बालघातिनी थी, छोटे-छोटे बच्चों की हत्या कर देती थी । विष्णुपुराण में उल्लेख है कि वह रात में ही बच्चों को चुपचाप विष लगा हुआ स्तन पिला देती थी । उसी समय बच्चों के अंग टूटकर नष्ट हो जाते थे । वह अपने स्तनों में ऐसा भयंकर विष लगाती थी कि बच्चों के होठों का स्पर्श करते ही उनके हाथ, पैर, सिर, पेट आदि सभी अंग अलग-अलग हो जाते थे । जीव गोस्वामीजी श्लोक '१०/६/४' में प्रयुक्त शब्द 'एकदा' का अर्थ करते हैं – 'रात्रौ' अर्थात् रात में ही पूतना आई । यही पराशर ऋषि का मत है और यही वैशम्पायन ऋषि का भी मत है । इसलिए वह पूतना रात्रि में उड़कर गोकुल में आई, उसने बहुत से बच्चों को मारा । अब यहाँ सोचा जा सकता है कि उसके द्वारा बहुत से ब्रजवासी मारे गये । तो इस बात की शंका नहीं करना चाहिए क्योंकि इसका उत्तर आचार्यों ने दिया है कि उसके द्वारा कंस पक्षीय बालक मारे गये, जो कंस का पक्ष करते थे । यह कंस की मूर्खता देखो कि अपने ही पक्ष के लोग उसने मरवा दिए । ऐसा कैसे हुआ, यह लीला शक्ति की विचित्रता है कि वह उन्हीं घरों में घुसती थी, जहाँ कृष्ण-नाम का कीर्तन नहीं होता था, यह भागवत का प्रमाण है – **न यत्र श्रवणादीनि.....** । (श्रीभागवतजी - १०/६/३) जो लोग कृष्ण नाम नहीं लेते थे, पूतना ने उन्हीं घरों के बच्चों को मारा । यह लीला शक्ति की विचित्रता है । जब वह गोकुल पहुँची तो अपनी माया से बड़ा ही सुन्दर रूप बना लिया । बड़ी सुन्दर साड़ी वह पहने थी, उसकी चोटी में बेले के फूल गुंथे हुए थे । मुख की ओर लटकी हुई अलकें बड़ी सुन्दर लगतीं थीं । उसके सुन्दर रूप को देखकर सभी ब्रजवासी मोहित हो गये । गोपियाँ उसे देखकर आपस में कहने लगीं कि यह तो लक्ष्मी हैं, अपने पति का दर्शन करने आयी हैं ।

यहाँ आचार्य लिखते हैं कि क्या असुरों की माया भक्तों को भी मोहित कर लेती है क्योंकि पूतना को देखकर गोपियाँ उसे लक्ष्मी समझ रही थीं तो क्या पूतना की माया ऐसी थी ? आचार्य लोग लिखते हैं कि ऐसी बात नहीं है, यहाँ आसुरी शक्ति काम नहीं कर रही है । वे लिखते हैं –

'यद्यपि पूतना सिद्धभक्तान् मोहितुं न शक्यते ।' पूतना सिद्ध भक्तों को मोहित नहीं कर सकती थी । तथापि भगवान् की लीला शक्ति लीला के लिए कभी-कभी ऐसा भी दिखा देती है कि सिद्ध भक्त भी मोहित हो गये ।

यद्यपि जगन्मोहिनी भगवन्मायापि तान् सिद्धभक्तान्मोहयितुं नोत्सहते तदपि कृष्णलीलाशोभासिद्धयर्थम् ऐन्द्रजालिकमायेव तानपि पूतनादिमाया मोहयति – भगवदिच्छावशादिति ज्ञेयम् ।

(श्रीविश्वनाथ चक्रवर्तीजी)

पद्म पुराण में उत्तर खण्ड में श्री शक्ति, लीला शक्ति और भू शक्ति का वर्णन किया गया है । उसमें लीला शक्ति को वृन्दा देवी बताया गया है, जो वृन्दावन की अधिष्ठात्री देवी हैं ।

अस्तु, पूतना नन्द भवन पहुँच गयी और उसने दूर से एक बालक को देखा । वह उसके पास गयी । बालकृष्ण पलना में लेटे हुए थे । सद्योजात बड़ा छोटा-सा शिशु है । नवनीत (माखन का लौंदा) के समान अत्यंत कोमल नीलमणि पलना में लेटे हुए हैं । पूतना को देखते ही भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने नेत्र बन्द कर लिए – **'निमीलितेक्षणः ।'** इस पर आचार्यों ने अनेकों भाव व्यक्त किये हैं कि पूतना के आते ही श्रीकृष्ण ने अपने नेत्र क्यों बन्द कर लिए ? वल्लभाचार्यजी ने सुबोधिनी में लिखा है कि अविद्या ही पूतना है । भगवान् श्रीकृष्ण ने सोचा कि मेरी दृष्टि के सामने अविद्या टिक नहीं सकती, ऐसे में लीला कैसे होगी इसलिए उन्होंने नेत्र बन्द कर लिए । पूतना ने बालकृष्ण को अपनी गोद में छोटा बच्चा समझकर इस तरह उठा लिया जैसे कोई मूर्ख व्यक्ति सोये हुए सर्प को रस्सी समझकर उठा ले । पास में यशोदा मैया और रोहिणी मैया खड़ी थीं किन्तु वे पूतना को रोक नहीं पायीं, चुपचाप उसे देखती रह गयीं । पूतना ने बालकृष्ण को अपनी गोद में लिटाकर भीषण विष लगे हुए स्तन को उनके मुख में दे दिया । उस समय बालकृष्ण ने अपने नेत्र इसलिए भी बन्द कर लिए थे क्योंकि नवजात शिशु जब

प्रारम्भिक अवस्था में स्तनपान करता है तो नेत्र बन्द करके माता के वात्सल्य का आस्वादन करता है । नवजात शिशु सदा नेत्र बन्द करके ही माता का स्तनपान करता है, उसे माता के वात्सल्य में अत्यधिक आनन्द का अनुभव होता है । नेत्र बन्द करने के पीछे अन्य भाव तो हैं ही, एक भाव यह भी है कि बालकृष्ण यहाँ वात्सल्य रस का आस्वादन कर रहे हैं । भगवान् कृष्ण पूतना के स्तनों को जोर से पकड़कर रोष के साथ उसके दूध को पीने लगे क्योंकि जानते थे कि इसका संहार करना है, नहीं तो जीवित रहकर यह अन्य बालकों को मारेगी । महात्मा लोग भाव बताते हैं कि रोष के साथ भगवान् स्तनपान क्यों कर रहे हैं, रोष के रूप में रोष के अधिष्ठातृ देवता शिवजी हैं, उन्होंने पूतना के स्तन में लगे विष का पान किया । बालक तो विष पीता नहीं है । बालकृष्ण पूतना के प्राणों को पीने लगे । प्राण निकलते समय बड़ा कष्ट होता है, अतः पूतना बालकृष्ण से अपने को छुड़ाने लगी किन्तु छोटा सा कन्हैया उसे छोड़ ही नहीं रहा था । मन ही मन कन्हैया कह रहे थे कि जिसको मैं पकड़ लेता हूँ फिर उसे छोड़ता नहीं हूँ । पूतना के प्राण निकल रहे थे, अतः कष्ट के कारण वह चिल्लाने लगी – 'अरे छोड़, छोड़, छोड़' किन्तु बालक तो दूध पीता ही रहा, बालक नहीं छोड़ता है । कष्ट के कारण पूतना के नेत्र पलट गये, वह अपने हाथ-पाँव पटकने लगी, उसके शरीर से पसीना बहने लगा और वह बुरी तरह रोने लगी । उसके रोने-चिल्लाने की अत्यन्त भयंकर ध्वनि से सारा आकाश भर गया, पहाड़ों के साथ पृथ्वी डगमगा उठी । उसके प्राण निकल गये और अपने राक्षसी रूप में प्रकट होकर वह बाहर गोष्ठ में आकर गिर पड़ी । गिरते-गिरते भी पूतना के शरीर ने छः कोस तक के वृक्षों को कुचल डाला । इस प्रकार छः कोस के शरीर वाली पूतना पृथ्वी पर गिर पड़ी और बाल कृष्ण निर्भय होकर उसके स्तनों पर खेल रहे थे । गोपियाँ दौड़कर वहाँ पहुँचीं और बालकृष्ण को उठा लिया । इसके बाद यशोदा और रोहिणी ने गोपियों के साथ -गाय की पूँछ को बालक कृष्ण के ऊपर घुमाया क्योंकि गाय की पूँछ में समस्त देवताओं का निवास है । उन्होंने गोमूत्र से बालकृष्ण को स्नान कराया फिर उनके अंगों में गो रज और गोबर लगाकर कवच से भगवान् के नामों को पढ़कर स्वयं भगवान् की रक्षा करने लगीं । इसका भाव यह है कि भगवान् का नाम तो स्वयं भगवान् की भी रक्षा करता है तो फिर हम लोगों की रक्षा क्यों नहीं करेगा ? इसलिए सभी लोगों को चाहिए कि अपने घरों में नित्यप्रति भगवान् के नामों का कीर्तन करें । यदि निष्ठा से नाम कीर्तन करोगे तो कोई संकट नहीं आयेगा ।

इस प्रकार गोपियों ने बाल कृष्ण के सभी अंगों की भगवन्नाम के द्वारा रक्षा की । ऐसा क्यों किया ? इसका उत्तर वे स्वयं देती हैं –

सर्वे नश्यन्तु ते विष्णोर्नामग्रहणभीरवः ।

(श्रीभागवतजी - १०/६/२९)

सभी अनिष्ट भगवान् विष्णु का नाम उच्चारण करने से भयभीत होकर नष्ट हो जाएँ ।

इसलिए सभी लोग कृष्ण नाम लो, तुम्हारी समस्त ग्रह बाधायें नष्ट हो जाएँगी । गोपियों द्वारा बालकृष्ण की रक्षा करने के लिए जो कवच का पाठ किया गया, उसका सारांश, उसका मूल १०/६/२९ में ही उन्होंने कह दिया है कि समस्त उत्पात भगवन्नाम के उच्चारण से नष्ट हो जाते हैं । इसलिए जोर-जोर से भगवान् का नाम लो और जितने भी उत्पात हैं – डाकिनी, राक्षसी, भूत-प्रेत, पिशाच,यक्ष, राक्षस, वृद्ध ग्रह, बालग्रह आदि ये सभी नष्ट हो जायेंगे ।

ब्रज के रसिक संत नवग्रह आदि को नहीं मानते हैं । इनका अस्तित्त्व तो मानते हैं किन्तु जैसा कि गोपियों द्वारा पाठ किये गये कवच में कहा गया है –

'सर्वग्रहभयङ्करः' (श्रीभागवतजी - १०/६/२६)

'भगवान् सभी ग्रहों के लिए भयंकर हैं, उनका नाम रक्षा करे ।' वे भगवान् तभी रक्षा करेंगे, जब हम उनका नाम लेंगे, चाहे शनि चढ़े, चाहे राहु चढ़े, चाहे केतु चढ़े । ये नौ ग्रह हैं जो हमेशा मनुष्य के ऊपर चढ़ते-उतरते रहते हैं । इनसे रक्षा का उपाय एकमात्र भगवन्नाम है । वैष्णवों को चाहिए कि ग्रहों की बाधा से बचने के लिए भगवन्नाम के अतिरिक्त दूसरे साधनों के चक्कर में न पड़े । यदि पंडित के पास ग्रह बाधा को दूर कराने के लिए जाओगे तो आजकल कोई भी पंडित ठीक से कार्य नहीं करता है । ऐसा देखने में आता है कि बड़े-बड़े भागवत सप्ताह कथा के कार्यक्रम में एक सौ आठ पंडित बैठते हैं, दक्षिणा पूरी ले लेते हैं किन्तु

ठीक से मूल पाठ भी नहीं करते हैं । इसीलिए आज हमारा समाज तेजहीन हो गया है । आज ब्राह्मणों में तेज नहीं रह गया है क्योंकि उनमें बेईमानी आ गयी है । ग्रह बाधा दूर करने के लिए तुम पंडित को पैसा दे दोगे तो सब पैसा वे रख लेंगे किन्तु ठीक से जप नहीं करेंगे । इसलिए समस्त ग्रहों को शांत करने का सबसे बढ़िया उपाय है – 'भगवन्नाम' । चाहे राहु चढ़े, चाहे केतु चढ़े, बैठकर दिन-रात अखण्ड कीर्तन करो । यह शास्त्र की बात है । इसलिए ब्रज रसिकों ने लिखा है –

हरिदासन के निकट न आवें,
प्रेत पितर ग्रह लेश ।

ब्रज रसिक कहते हैं कि हम लोग ग्रह आदि की पूजा नहीं करते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि आजकल न मन्त्र शुद्ध रहे, न व्यक्ति शुद्ध रहे । इसलिए स्वयं बैठकर भगवन्नाम कीर्तन करो ।

स्वप्नदृष्टा महोत्पाता वृद्धबालग्रहाश्च ये ।
'सर्वे नश्यन्तु ते विष्णोर्नामग्रहणभीरवः'

(श्रीभागवतजी - १०/६/२९)

जितने भी उत्पात ग्रह आदि हैं, अनन्य निष्ठा यही है कि भगवन्नाम लो, ये ग्रहादि जितने भी अनिष्ट हैं, सब भाग जायेंगे, इसलिए गाँठ बाँध लो, डटकर कीर्तन करो –

जय श्रीराधे जय नन्दनन्दन ।
जय श्री श्यामा नैनन अंजन,
जय बरसानो जय गह्वर वन,
जय वृन्दावन जय गोवर्धन ।

भागवत सप्ताह में यही सीखने की बात है कि जो गोपीजन कर रही हैं, वही हम लोग भी करें ।

श्रीशुकदेवजी कहते हैं – इस प्रकार ब्रजगोपिकाओं ने श्रीकृष्ण के अनिष्टों-अरिष्टों की शांति भगवन्नाम के द्वारा की । इसके बाद यशोदा मैया ने अपने लाला को स्तन पान कराया । तब तक नन्दबाबा अपने साथी गोपों के साथ मथुरा से गोकुल में आ गये । पूतना के भयंकर शरीर को देखकर वे आश्चर्यचकित हो गये । ब्रजवासियों ने कुल्हाड़ी से पूतना के विशाल शरीर को टुकड़े-टुकड़े करके लकड़ियों पर रखकर जला दिया । जब उसका शरीर जलने लगा तब उसके धुएँ से अगर की सुगन्ध आ रही थी क्योंकि भगवान् ने उसका स्तनपान किया था । पूतना एक राक्षसी थी, बच्चों को मारकर वह उनका खून पी जाती थी । भगवान् को भी उसने मार डालने की इच्छा से स्तन पिलाया था, फिर भी उसे परम गति मिली, फिर जो लोग प्रेम से उनकी पूजा करते हैं और उनको प्रिय लगने वाली वस्तुएँ समर्पित करते हैं, उनका तो कहना ही क्या है ? जिन माताओं और गायों ने ब्रह्ममोह लीला में प्रभु को प्रेम से अपना दूध पिलाया, वे क्यों न प्रभु को पायेंगी ?

जो मनुष्य श्रद्धा से इस कथा को सुनता है, उसे भगवान् के प्रति प्रेम की प्राप्ति होती है ।

गर्ग संहिता में पूतना के पूर्व जन्म की कथा लिखी है । राजा बलि की कन्या थी रत्नमाला । जब छोटे से वामन भगवान् राजा बलि की यज्ञशाला में आये तो रत्नमाला उनको देखकर सोचने लगी कि ऐसा बालक मुझे मिले तो मैं उसको गोद में बैठाकर स्तन पान कराऊँगी । इस प्रकार का वात्सल्य भाव उसके हृदय में आ गया किन्तु जब वामन भगवान् ने अपने पाँव बढ़ाकर बलि का त्रिलोकी का राज्य छीन लिया और उन्हें वरुण पाश में बाँध दिया तो वह मन में सोचने लगी कि यदि मेरा बालक ऐसा होता तो मैं उसे जहर पिला देती । प्रभु अन्तर्यामी हैं, उसके मन की बात जानकर बोले कि तेरी दोनों ही कामनाएं पूरी होंगी, तू मुझे स्तन पान भी कराएगी और जहर भी पिलाएगी ।

इस कथा का अभिप्राय यही है कि जिसकी जैसी भावना होती है, उसे वैसी ही सिद्धि होती है । इसलिए हम लोगों को सदा पवित्र भावना ही करनी चाहिए । राग-द्वेष नहीं करना चाहिए, नहीं तो ऐसे व्यक्ति को पूतना ही बनना पड़ेगा, चाहे कितनी ही भागवत सप्ताह सुन ले । मन के संकल्प को सदा शुद्ध रखो, प्रेममय रखो । छोटी-छोटी बातों पर खीझोगे तो फिर पूतना बनने की स्थिति आ जाएगी । सदा प्रसन्न रहो । इस कथा से यही शिक्षा मिलती है । थोड़ा भी हम किसी से चिढ़ रहे हैं, अशुभ सोच रहे हैं तो उसका फल अशुभ ही मिलेगा । इसलिए संकल्प अच्छा रखो ।

अहो बिधना तोपै अचरा पसार माँगौ, जनम-जनम दीजै मोहि याहि ब्रज बसिबौ ।
अहीर की जाति समीप नन्द घर, घरी-घरी स्याम हेरि-हेरि हँसिवो ।

'सहनशीलता व समत्व' से सरस चित्त

यही संकल्प करो कि सभी को दूध पिलाओ अर्थात् सभी का मंगल चाहो और जो चिढ़ने का, द्वेष का संकल्प है, वह मत रखो, नहीं तो यह विचार करो कि रत्नमाला वामन भगवान् के प्रति वात्सल्य भाव आने के कारण अगले जन्म में यशोदाजी की तरह बनने जा रही थी किन्तु द्वेष करने के कारण उसको पूतना बनना पड़ गया । इसलिए सहनशील बनो । रत्नमाला की माँ विन्ध्यावलीजी पूज्य मानी गयीं क्योंकि उन्होंने कहा कि भगवान् ही सारे संसार के स्वामी हैं, अगर उन्होंने मेरे पति से त्रिलोकी का राज्य छीन लिया तो क्या हुआ, इस संसार के बनाने, पालन करने और संहार करने वाले तो भगवान् ही हैं, यह उन्हीं का है । किन्तु इसके विपरीत रत्नमाला वामन भगवान् द्वारा त्रिलोकी का राज्य छीनने से चिढ़ गयी, इसीलिए पूतना बनी । अतः चिढ़ने वाली, द्वेष करने वाली स्त्रियाँ पूतना ही हैं ।

राजा परीक्षित ने कहा – महाराज ! भगवान् श्रीकृष्ण की दूसरी बाल-लीलाओं का भी वर्णन कीजिये, जिनको सुनने से संसार से प्रेम हट जाता है, विषयों की तृष्णा भी भाग जाती है । शुकदेवजी कहते हैं – एक बार की बात है जब श्यामसुन्दर दो महीने बीस दिन के हो गये थे, उस समय तक बच्चा करवट बदलना सीखता है । बहुत धीरे-धीरे बच्चा सीखता है । पहले तो शय्या पर पड़ा ही रहता है, फिर करवट बदलना सीखता है, तदनन्तर धीरे-धीरे उठना-बैठना सीखता है, फिर धीरे-धीरे खड़ा होना सीखता है । बालकृष्ण भी यही लीला कर रहे थे । अभी तक वे करवट ही नहीं बदल पा रहे थे, बिस्तर पर सीधे पड़े रहते थे । अब दो महीने बीस दिन के हो जाने पर कन्हैया ने पहली बार करवट बदली । मैया प्रसन्न होकर बोलीं – 'वाह ! अब तो मेरा लाला करवट बदलने लगा है ।' मैया ने बड़ा उत्सव मनाया । कृष्ण के जन्म नक्षत्र योग पर उन्हें स्नान कराया और वस्त्र पहनाकर उन्हें सुला दिया । छोटा बच्चा सोता बहुत है, हाथ-पाँव चलाता रहता है, उससे थककर सो जाता है । उसके दो ही काम होते हैं । माँ का दूध पीकर खूब हाथ-पाँव चलाता रहता है और फिर सो जाता है । जब कन्हैया को नींद आई तो यशोदा मैया ने उन्हें सुला दिया और घर पर आयी हुई स्त्रियों का स्वागत-सत्कार करने लगीं । थोड़ी देर में श्यामसुन्दर की आँखें खुलीं और वे रोने लग गये । यशोदाजी उत्सव में आये ब्रजवासियों को तरह-तरह के उपहार दे रही थीं, उन्हीं के सत्कार में तन्मय होकर वे अपने बालक का रोना नहीं सुन सकीं । श्यामसुन्दर क्यों रो रहे थे ? **'रुदन् स्तनार्थी'** – वे स्तनार्थी थे, मैया का स्तन पान करना चाहते थे । जब मैया नहीं आयीं तो श्यामसुन्दर ने अपना हाथ-पाँव पटकना शुरू किया । उस समय बाल कृष्ण एक छकड़े के नीचे लेटे थे । उन्होंने पाँव पटकना इसलिए शुरू किया क्योंकि उनके ऊपर जो छकड़ा था, उसमें एक असुर आविष्ट हो गया था । उसको देखकर श्रीकृष्ण ने अपना पाँव फैलाकर जोर से प्रहार किया । दो-तीन महीने के छोटे से श्यामसुंदर थे और उनके चरण भी छोटे-छोटे थे किन्तु जब उन्होंने चरण बढ़ाया तो छोटे चरणों से लम्बा चरण निकला और जोर से छकड़े पर प्रहार किया तो वह उलट गया । उस छकड़े पर दूध-दही से भरी हुई मटकियाँ और दूसरे पात्र रखे थे । वे सब टूट-फूट गये । छकड़े के पहिये-धुरे आदि अस्त व्यस्त हो गये । इतने में वहाँ यशोदा मैया, रोहिणीजी और अन्य गोप-गोपी भी आ गये । वे सब आपस में कहने लगे कि इतना बड़ा छकड़ा अपने आप कैसे उलट गया ? छकड़े के पास कुछ गोप बालक खेल रहे थे, उन्होंने कहा – 'अरी यशोदा मैया ! नन्दबाबा ! ये छकड़ा अपने आप नहीं उलटा है । पालने में जो कन्हैया लेटा है, इसी ने अपना पाँव बढ़ाकर छकड़े पर ऐसा मारा कि वह उलट गया ।' बच्चों की बात सुनकर सभी लोग कहने लगे – 'छोटा सा ये लाला है और छकड़ा इतना ऊपर था, ये अपने छोटे से पाँव से इतने बड़े छकड़े को कैसे पलट देगा ?' ऐसा कहकर वे उन बालकों को फटकारने लगे । बालकों ने बहुत कहा कि हमने अपनी आँखों से देखा है, कन्हैया ने ही अपने पाँव की ठोकर से छकड़ा उलटा है किन्तु **'न ते श्रद्दधिरे गोपा'** (श्रीभागवतजी - १०/७/१०) गोपों ने बालकों की बात पर ध्यान नहीं दिया । वे सच बोल रहे थे फिर भी सबने उन्हें

फटकार दिया । छकड़ा के गिरने से उसमें घुसकर बैठा असुर भी छकड़े के नीचे दबकर मर गया । यह कंस का भेजा असुर था जो बालकृष्ण को मारने के लिए आया था । इस असुर के पूर्व जन्म की कथा यह है कि दैत्य हिरण्याक्ष का पुत्र था उत्कच । एक बार वह लोमश ऋषि के आश्रम पर गया और वहाँ बहुत से हरे-भरे वृक्षों को तोड़ने लगा । उसकी इस दुष्टता को देखकर लोमश ऋषि ने उसे शाप दे दिया – 'दुष्ट ! तू देह रहित हो जा ।' अब तो उस असुर ने लोमश ऋषि के चरणों पर गिरकर उनसे क्षमा माँगी । उन्होंने कहा – 'वैवस्वत मन्वन्तर में श्रीकृष्ण के चरण स्पर्श से तेरी मुक्ति हो जाएगी ।' इसीलिए कहा जाता है कि हरे वृक्षों को काटना नहीं चाहिए । हरे वृक्ष काटोगे तो असुर ही बनोगे । ब्रज के वृक्षों को काटने से करोड़ों गायों और ब्राह्मणों की हत्या के समान पाप लगता है ।

कोटि गाय बामन हत शाखा,
तोड़त हरि ही बिदूख ।
धनि-धनि वृन्दावन के रूख ।

ब्रज की लताओं-वृक्षों को तोड़ने से भगवान् को भी कष्ट होता है ।

अस्तु, छकड़ा गिरने के बाद यशोदाजी ने अपने लाला को स्तनपान कराया । ब्राह्मणों ने बालकृष्ण को आशीर्वाद दिया । ब्राह्मणों के आशीर्वाद झूठे नहीं होते हैं ।

एक दिन की बात है, यशोदारानी अपने प्यारे लाल को गोद में लेकर लाड़ कर रही थीं, उसके गालों पर अपना हाथ फेर रही थीं । इतने में ही छोटे-से कन्हैया भारी हो गये, उनका बोझ इतना ज्यादा बढ़ा कि मैया उस बोझ को सहन नहीं कर पायीं और बालकृष्ण को पृथ्वी पर बैठा दिया । यशोदा मैया सोचने लगीं कि यह क्या हो गया, मेरे छोटे से लाला का शरीर इतना भारी कैसे हो गया ? श्यामसुन्दर ने ऐसा इसलिए किया क्योंकि कंस का भेजा हुआ असुर तृणावर्त मथुरा से गोकुल बवंडर बनकर आ रहा था । वे समझ गये कि तृणावर्त आ रहा है और मुझे आकाश में उड़ा ले जायेगा एवं मेरे साथ ही मैया को भी उड़ा ले जायेगा, इसलिए उन्होंने अपना भार बढ़ा लिया ताकि मैया मुझे अलग रख दे और तृणावर्त मैया को न उड़ा सके । उधर तृणावर्त आया और बैठे हुए बालक कृष्ण को उड़ाकर आकाश में ले गया । यशोदा मैया अपने लाला के भारी बोझ के कारण उसे जमीन पर बिठाकर घर के काम में लग गयी थीं । जब वे वहाँ लौटकर आईं तो देखा कि कृष्ण नहीं थे । उस समय तृणावर्त ने बवंडर रूप से इतनी धूल और बालू उड़ाई कि सभी लोग व्याकुल हो गये । उस जोर की आँधी और धूल की वर्षा में किसी को कुछ दिखाई नहीं दे रहा था । यशोदाजी अपने बालक को न देखकर दुखी होकर पृथ्वी पर गिर पड़ीं । बवंडर के शान्त होने पर जब धूल की वर्षा का वेग कम हो गया, तब यशोदाजी के रोने की आवाज सुनकर गोपियाँ दौड़कर उनके पास आयीं । गोपियाँ यशोदाजी के आँगन में और आसपास सब जगह हाथों से कृष्ण को टटोलने लगीं । आँखों में तो धूल की वर्षा के कारण कुछ दिखाई नहीं दे रहा था । इधर तृणावर्त श्रीकृष्ण को बवंडर रूप से आकाश में उड़ा ले गया, उन्होंने कहा कि थोड़ी दूर चलकर मैं तुझे देखूँगा, अभी नीचे तो ब्रजवासी बहुत परेशान हो रहे हैं । इसलिए कृष्ण हल्के बने रहे और तृणावर्त आसानी से उन्हें ऊपर उड़ाये ले जा रहा था । जब वह उन्हें और दूर उड़ाने लगा तो कृष्ण ने सोचा कि ज्यादा दूर जाना भी ठीक नहीं है क्योंकि मुझे तो अभी यहीं गोकुल में ही उतरना है । अब छोटे से कन्हैया ने अपना बोझ बढ़ाना चालू किया । जब उन्होंने अपना बोझ बहुत ज्यादा बढ़ा लिया तो तृणावर्त की चाल धीमी पड़ गयी । वह सोचने लगा कि क्या मैं किसी पत्थर की बड़ी शिला को उठा लाया हूँ या यह कोई पहाड़ का टुकड़ा है, जो इसमें इतना बोझ है । तब तक कृष्ण ने उसका गला पकड़ लिया, तृणावर्त ने सोचा कि अब यह मुझे छोड़ेगा किन्तु कन्हैया ने तो अपने दोनों हाथों से कसकर उसका गला ऐसा पकड़ा कि वह उन्हें छोड़ भी नहीं पाया । इसके बाद उन्होंने उसका गला इतनी जोर से दबाया कि उस असुर की आँखें बाहर निकल आयीं, उसके प्राण निकल गये और वह बड़ी-सी चट्टान पर गिर पड़ा । उसका शरीर चकनाचूर हो गया, खोपड़ी अलग हो गयी । पाँव अलग गिरा, सब अंग अलग-अलग हो गये । वहाँ पर जो स्त्रियाँ कृष्ण के न दिखने पर रो रही थीं, उन्होंने देखा कि विशाल दैत्य की छाती पर छोटा-सा कन्हैया खेल रहा है, अपनी

शिशु की बोली में 'आँय-आँय' करके कुछ बोल रहा है और असुर की छाती पर अपना हाथ पटक रहा है । उसे देखकर गोपियाँ आश्चर्यचकित होकर बोलीं – 'अरे, यह बालक तो जीवित है ।' गोपियाँ दौड़कर गयीं, कन्हैया को उठाकर लायीं और यशोदा मैया की गोद में दे दिया । यहाँ पर एक सूक्ति है, जिसे ब्रजवासियों ने श्रीकृष्ण के तृणावर्त के चंगुल से सकुशल लौट आने पर कहा –

हिंस्रः स्वपापेन विहिंसितः खलः
साधुः समत्वेन भयाद् विमुच्यते ।

(श्रीभागवतजी - १०/७/३१)

उस हिंसक दुष्ट को उसके पाप ही खा गये । साधु पुरुष अपनी समता से ही सम्पूर्ण भयों से मुक्त हो जाता है । इसलिए तुमको कोई गाली दे अथवा वैर करे तो उस पर क्रोध मत करो, वह अपने पाप से स्वयं ही नष्ट हो जायेगा, तुम तो समान बने रहो । साधु-भक्त का यही काम है । बड़े-बड़े ऋषियों ने अपराध करने पर, गलती करने पर जो शाप दिए तो कल्याण के लिए दिए । वे हमारे जैसे नहीं थे । ये मत समझ लेना कि वे हमारी तरह थे और पराशर ऋषि सत्यवती को देखकर मोहित हो गये तो ये मत सोच लेना कि हम भी किसी स्त्री को देखकर मोहित हो जाएँ । ऐसा नहीं सोचना चाहिए । वल्लभाचार्यजी ने लिखा है – **'जीवः स्वभावतो दुष्टः ।'** जीव स्वभाव से दुष्ट है । अतः सदा प्रतिकूल तर्क की ओर जाता है । ब्रह्मसूत्र में कहा गया है – **'तर्काप्रतिष्ठानात्'** – तर्क से उस परम तत्त्व की अप्रतिष्ठा हो जाती है । साधु पुरुष समत्व के द्वारा समस्त भयों से छूट जाता है । इससे उसका चित्त रसीला बना रहेगा और चित्त के रसीला बनने का सबसे बड़ा उपाय है – समत्व बुद्धि । वृन्दावन के रसिकों ने भी यही कहा है –

सब सौं हित निष्काम मति वृन्दावन विश्राम ।
राधावल्लभ लाल को हृदय ध्यान मुख नाम ॥

श्रीहितहरिवंशजीमहाराज कहते हैं – सबसे हित (प्रेम) ही करना, चाहे कोई वैरी है, तब तुम रसिक बनोगे । ब्रजवासियों ने भागवत (१०/७/३१) में बहुत सुन्दर सूक्ति बताई कि सदा समत्व रखो, फिर भय से छूट जाओगे । यदि समत्व से अलग जाओगे तो भक्तिमार्ग से रहित हो जाओगे ।

आगे ब्रजवासी कहने लगे कि हमने ऐसे कौन-से पुण्य कर्म किये हैं, जिनके फलस्वरूप हमारा यह बालक मरकर भी फिर से लौट आया ।

एक बार यशोदा मैया अपने प्यारे बालक को गोद में बैठाकर बड़े प्रेम से स्तन पान करा रही थीं । माता जब स्तन पान कराती है तो उस समय अपने बच्चे का मुख अवश्य देखती है क्योंकि उस समय माँ का दूध पीकर बच्चे का पेट भरता है तो वह बड़ा प्रसन्न होता है । उस समय माता को जिस वात्सल्य सुख की अनुभूति होती है, उसे हम लोग नहीं समझ सकते । इसी तरह यशोदा मैया भी स्तन पान कराते समय अपने लाड़ले लाल का मुख देख रही थीं । दूध पीते-पीते जब बच्चे को नींद आती है तो वह बड़े जोर से जँभाई लेता है । इसी प्रकार बालकृष्ण भी जँभाई लेने लगे । मैया उनके मुख के भीतर देखने लगीं कि दूध इसके मुख में है कि नहीं, अभी इसके दाँत निकले कि नहीं । इस तरह जब मैया अपने कन्हैया के मुख में देख रही थीं तो इन लीलाविहारी ने अपने मुख में सारा विश्व दिखा दिया । उसमें आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, समुद्र, वायु, वन, पहाड़, नदियाँ और समस्त चराचर प्राणी दिखा दिए । यह क्या है, यह है ऐश्वर्य शक्ति । भगवान् के साथ उनकी ऐश्वर्य शक्ति सदा चलती है । समय-समय पर जब वह भगवान् का ऐश्वर्य दिखाती है तो प्रेम शक्ति आकर उसे धक्का देकर निकाल देती है । ऐश्वर्य, भक्ति या प्रेम के पीछे चलता है । इस प्रसंग में जीव गोस्वामीजी ने नारद पाञ्चरात्र का एक श्लोक लिखा है –

"हरिभक्तिमहादेव्या- सर्वा मुक्त्यादिसिद्धयः ।
भुक्तयश्चाद्भुतास्तस्याश्चेटिकावदनुव्रताः ॥"

(श्रीजीवगोस्वामीजी, वैष्णव तोषिणी)

भाई, तुम लोग भक्ति करो, वे महादेवी हैं । इनके पीछे भुक्ति-मुक्ति और सिद्धियाँ चींटी की तरह चलती हैं, जैसे कहीं गुड़ डाल दिया जाये तो हजारों चीटियाँ वहाँ आ जाती हैं । ऐसे ही जहाँ भगवद्भक्ति है, वहाँ ऋद्धि-सिद्धि चींटी की तरह आ जाती हैं । इसलिए अपने मन को समत्व में लाकर कृष्ण में लगाओ ।

श्रीभागवत-सार 'माधुर्ययी भक्ति'

राग-द्वेष में मन को नष्ट मत करो । मन को सदा सुन्दर कृष्ण रस से युक्त रसीला बनाओ । ऐसा करने से कृष्ण का अनन्त ऐश्वर्य तुम्हारे पास आयेगा ।

अस्तु, जब यशोदा मैया अपने पुत्र के मुख में सारा जगत देखकर डर गयीं तो झट उन्होंने अपने नेत्र बन्द कर लिए । श्रीविश्वनाथचक्रवर्तीजी ने लिखा है कि भगवान् की ऐसी माधुर्य रस भरी लीलाओं में ऐश्वर्य शक्ति बार-बार क्यों आ जाती है तो वे लिखते हैं –

"प्रेमदेव्याः परीक्षार्थमागच्छन्त्यन्तरान्तरा ।
शक्तिरेषा हरेः किन्तु तया दासी कृता भवेत् ॥"

(विश्वनाथ चक्रवर्ती, सारार्थदर्शिनी)

विश्वनाथ चक्रवर्तीजी लिखते हैं कि प्रेम देवी की परीक्षा के लिए ऐश्वर्य आता है । यदि ऐश्वर्य से प्रेम दब जाये तो वह प्रेम नहीं है । (दो पैसे का सरकारी नौकर कोई दरोगा यदि वारंट लेकर आ जाये तो हम लोग तथा अन्य बड़े-बड़े लोग डर जायेंगे ।) ऐश्वर्य शक्ति प्रेम की परीक्षा लेने के लिए आती है, अपनी धौंस जमाने के लिए आती है परन्तु प्रेम शक्ति उसे दो धक्के लगाती है तो ऐश्वर्य शक्ति भाग जाती है क्योंकि प्रेम शक्ति बलवती है ।

बहुत से वक्ता श्रीमद्भागवत की कथा तो कहते हैं किन्तु वे कृष्णलीला कम कहते हैं, छोड़ देते हैं या माखन चोरीलीला, रासलीला आदि को कम कहते हैं । ये बात आचार्यों की शिक्षा के विरुद्ध है । आचार्यगण कहते हैं कि श्रीमद्भागवत का फल यही है कि माधुर्य की भक्ति मिले क्योंकि ऐश्वर्य की भक्ति तो भगवान् के बहुत से अवतारों में है । 'भगवान्' वराह बने, नृसिंह बने, वामन बने, राम बने – तो ऐश्वर्य की भक्ति तो उनके सभी अवतारों में है किन्तु कृष्ण भक्ति में विशेषता है माधुर्य की और यदि कोई कृष्ण भक्ति में भी आकर माधुर्य को छोड़ दे और भगवान्-भगवान् ही कहता रहे ऐश्वर्य के भाव से तो यह कृष्ण भक्ति नहीं है । वह श्रीमद्भागवत को समझा नहीं है । वेदव्यासजी ने तो केवल माधुर्य लीला के प्रतिपादन के लिये ही कृष्ण लीला कही है । यदि हम कृष्ण लीला कहते हैं किन्तु माधुर्य लीला को कम कहते हैं या कुछ लोग कृष्ण लीला को दूसरा ही रूप दे देते हैं, अध्यात्म का रूप दे देते हैं, यह आचार्यों के सिद्धान्त के विरुद्ध है । कोई वक्ता यदि यह सोचे कि माखन चोरी लीला नहीं कहना चाहिए क्योंकि इससे लोग चोरी सीख जायेंगे, रास लीला भी नहीं कहनी चाहिए, नहीं तो लोग कामुकता सीखेंगे तो यह ठीक नहीं है । आचार्यजन कहते हैं कि उपासक के लिए तो ये ही लीलायें ध्यान करने के लिए हैं । इन्हीं लीलाओं को यदि नहीं कहोगे तो बेचारा उपासक तो ठनठन पाल मदन गोपाल रह जायेगा । दुनिया के लोगों को मर्यादा सिखाने के लिए यदि माधुर्य रस से भरी माखन चोरी लीला, रास लीला आदि को छोड़ दोगे तो वे तो वैसे भी मधुर नहीं होंगे, चाहे तुम कितना भी प्रयास कर लो । उनके लिए भक्तों की उपेक्षा क्यों की जाये ? अब तक तो भगवान् ने ऐश्वर्य मिश्रा लीलायें कीं, अब भगवान् की माधुर्य रस से युक्त लीलाओं का प्रसंग आ रहा है ।

श्रीशुकदेवजी कहते हैं – गर्गाचार्यजी यदुवंशियों के पुरोहित थे । एक बार वसुदेवजी ने उनसे कहा कि आप नन्दबाबा के गोकुल में जाइए, वहाँ मेरे दो बालक रहते हैं । वसुदेवजी की प्रेरणा से गर्गाचार्य जी गोकुल में आये । नन्दबाबा उन्हें देखकर बहुत प्रसन्न हुए और उनकी भगवद्भाव से पूजा की । पूजा करने के बाद नन्दबाबा ने उनसे कहा – 'महाराज ! आप तो बड़ी कृपा करके हमारे यहाँ पधारे हैं । आप ज्योतिष शास्त्र के बड़े ज्ञाता हैं तथा पूर्व जन्म एवं वर्तमान जन्म की बातों को भी जानते हैं । इसलिए आप मेरे इन दोनों बालकों के नामकरणादि संस्कार कर दीजिये ।' गर्गाचार्यजी ने कहा – 'नन्दजी ! मैं तो यदुवंशियों का पुरोहित हूँ । यदि मैं तुम्हारे बालक का नामकरण संस्कार करूँगा तो सब लोग समझेंगे कि यह वसुदेव का पुत्र है और कंस को इस बात का पता लगने पर वह तुम्हें परेशान करेगा ।'

नन्दबाबा ने कहा – 'आचार्यजी ! आप चुपचाप खिरक (गोशाला) में नामकरण संस्कार कर दीजिये, कोई उत्सव नहीं किया जायेगा, किसी को इसका पता भी नहीं चलेगा ।' गर्गाचार्यजी बोले – 'ठीक है, एकान्त में छिपकर

नामकरण संस्कार मैं करूँगा, किसी को भी इसका पता नहीं चलना चाहिए ।' नन्दबाबा बोले – 'ऐसा ही होगा ।' नन्दबाबा गर्गाचार्यजी को एकान्त में ले गये, जिससे किसी ब्रजवासी को इस बात का पता न लगे । गर्गाचार्यजी आसन पर बैठ गये । वहाँ रोहिणी माता और यशोदा मैया भी अपने पुत्रों को गोद में लेकर बैठ गयीं । गर्गाचार्यजी ने बलरामजी को देखकर कहा – 'यह रोहिणी का पुत्र है, इसका नाम होगा 'राम' । क्योंकि **रमयन् सुहृदो गुणैः** – यह अपने सगे सम्बन्धी और मित्रों को रमण कराएगा, उन्हें आनन्दित करेगा ।' श्रीजीव गोस्वामीजी ने लिखा है – **'आत्मारामादीन् रमयन् रामः'** यह बड़े-बड़े आत्माराम मुनियों को भी रमण कराएगा, उन्हें आनन्दित करेगा, इसलिए इसका नाम रखा गया – 'राम' । गर्गाचार्य जी ने आगे कहा – 'इसके बल की कोई सीमा नहीं है, अतः इसका एक नाम 'बल' भी होगा । यदुवंशियों में और तुम लोगों में यह कोई भेदभाव नहीं रखेगा और फूट पड़ने पर इनको खींचकर लायेगा, उनमें मेल कराएगा । इसलिए इसका एक नाम 'संकर्षण' भी होगा । यह जो छोटा सा नीले रंग का बालक है, यह बड़ा चंचल है, मुझको देख-देख करके यह अभी से हाथ-पैर उछाल रहा है । पिछले युगों में इसने श्वेत, रक्त और पीत वर्णों को स्वीकार किया था । यह तुम्हारा आत्मज, तुम्हारे शरीर से उत्पन्न तुम्हारा पुत्र है । इसे वासुदेव भी कहते हैं, यह पहले कभी वसुदेवजी के घर भी पैदा हुआ था । इसके बहुत से नाम, रूप हैं, जिन्हें मैं जानता हूँ परन्तु तुम नहीं जानते ।'

वल्लभाचार्यजी कहते हैं कि गर्गाचार्यजी ने जो इनके तीन वर्ण बताये, वे युग धर्म के अनुसार हैं । इन्हें ग्यारहवें स्कन्ध में भी बताया गया है । विश्वनाथ चक्रवर्तीजी ने इन्हीं श्लोकों का प्रमाण दिया है ।

कृते शुक्लश्चतुर्बाहुः जटिलो वल्कलाम्बरः ।
कृष्णाजिनोपवीताक्षान् बिभ्रद् दण्डकमण्डलू ॥

(श्रीभागवतजी - ११/५/२१)

त्रेतायां रक्तवर्णोऽसौ चतुर्बाहुस्त्रिमेखलः ।
हिरण्यकेशः त्रय्यात्मा स्रुक् स्रुवादि उपलक्षणः ॥

(श्रीभागवतजी - ११/५/२४)

द्वापरे भगवान् श्यामः पीतवासा निजायुधः ।
श्रीवत्सादिभिः अङ्कैश्च लक्षणैः उपलक्षितः ॥

(श्रीभागवतजी - ११/५/२७)

जीव गोस्वामीजी ने लिखा है कि इनका नाम कृष्ण क्यों है, कृष्ण नाम का अर्थ वे बताते हैं -

सर्वांशमेवादाय स्वयमवतीर्णत्वात् अतः स्वयं कृष्णत्वात् सर्वनिजांशस्य कृष्णीकर्तृत्वात् सर्वाकर्षकत्वाच्च मुख्यं तावत् कृष्णेति नाम अतः "कृषिर्भूवाचकः शब्दो णश्च निर्वृतिवाचकः । तयोरैक्यं परं ब्रह्म कृष्ण इत्यभिधीयते" –

(जीव गोस्वामीजी, वैष्णव तोषिणी)

यह समस्त अवतारों का मूल अवतारी पुरुष कृष्ण है, अपने समस्त अवतारों के अंश को लेकर यह सबको आकर्षित करता है । कृष्ण का अर्थ है, जो सबको अपनी ओर खींचे, कृष् धातु माने खींचना, क्या खींचते हैं ? जितने भी उनके अवतार हैं, सबकी मधुरता उन्होंने इकठ्ठा की । वे माखन खायेंगे तो माखन कैसे बनता है ? सारा दही एकत्रित करके उसे मथा जाता है, मथने पर उसमें से माखन निकलता है । वैसे ही जीवगोस्वामीजी यह भाव दे रहे हैं कि अब तक कृष्ण के जितने भी अवतार हुए, उन्होंने सबकी मधुरता इकठ्ठा की और सबको खींच करके, मिला करके माखन बना करके कृष्ण बन गये और माखन खाने लग गये । इसलिए उनका नाम कृष्ण है ।

गर्गाचार्यजी ने नन्दबाबा से कहा – 'यह तुम लोगों का बड़ा कल्याण करेगा, इसकी सहायता से तुम लोग बड़ी-बड़ी विपत्तियों को बड़ी आसानी से पार कर लोगे । तुम्हारे पुत्र ने सज्जन पुरुषों की पहले भी कई बार रक्षा की है ।'

इस प्रकार कृष्ण-बलराम का नामकरण संस्कार करके गर्गाचार्यजी अपने आश्रम को चले गये । उनकी बात सुनकर नन्दबाबा को बड़ा आनन्द हुआ ।

अति हरि कृपा जाहि पर होई । पाँय देइ एहि मारग सोई ॥
भगवान् की जब अति कृपा होती है, तब मनुष्य इस मार्ग पर पाँव रखता है; इस मार्ग पर चलना तो बड़ा कठिन है ।

ब्रजप्रेम-प्रदायिनी 'ब्रज-कीच'

शुकदेवजी कहते हैं – परीक्षित ! कुछ ही दिनों में राम-केशव (कृष्ण-बलराम) घुटनों के बल चलने लगे । अब इनकी प्रगति हो गयी । दोनों भाई घुटनों के बल अपने नन्हे-नन्हे पाँवों को घसीटते हुए चलते । वे दोनों अपने आभूषणों को छम-छम करते चलते थे क्योंकि उनके चरणों में यशोदाजी ने मणियों के ऐसे नूपुर पहना दिए थे कि उनकी ध्वनि बहुत दूर तक जाती थी ।

'घोषप्रघोषरुचिरं व्रजकर्दमेषु' (श्रीभागवतजी - १०/८/२२)

वल्लभाचार्यजी लिखते हैं कि घोष-प्रघोष का मतलब है कि कृष्ण-बलराम जल्दी चलते थे, छुन -छुन करके चलते थे ।

जीवगोस्वामीजी लिखते हैं – घोष माने नुपुर और प्रघोष माने किंकिणी । यशोदाजी ने कन्हैया की कमर में किंकिणी बाँध दी थी । ये दोनों बालक कहाँ चलते थे, ब्रज की कीचड़ में चलते थे । जीवगोस्वामीजी कहते हैं कि ब्रज की कीचड़ को ऐसा मत समझना, जैसे प्राकृत संसार में होती है । वे कहते हैं कि ब्रजभूमि दिव्य है । जीव गोस्वामी जी ने यहाँ अपनी टीका में कालिदासजी का भी श्लोक उद्धृत किया है –

"सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यम्"

यह श्लोक उस प्रसंग का है, जब शकुन्तला वल्कल लेकर खड़ी है और दुष्यन्त कह रहे हैं कि यह सुन्दर वस्त्र नहीं पहने है, तब भी कितनी सुन्दर लग रही है । जो सुन्दर है, वह किसी भी अवस्था में, कहीं भी चला जाये, सदा सुन्दर ही लगेगा और जो असुंदर है, बड़े-बड़े दाँत हैं जिसके, वह चाहे कितना भी क्रीम-पाउडर लगा ले किन्तु उसके लम्बे दाँत तो छिपेंगे नहीं । जीव गोस्वामीजी कह रहे हैं कि कृष्ण-बलराम के अंगों में ब्रज की कीच लगी है, तब भी वे सुन्दर लग रहे हैं । कीच (कीचड़) का भाव उन्होंने लिखा है कि ब्रज की भूमि बड़ी सुन्दर, दिव्य है । यहाँ की रज दिव्य है । यहाँ की कीच भी दिव्य है, उसे प्राकृत संसार की गंदी कीच मत समझ लेना । बाल गोपाल के नूपुरों की छुम-छुम ध्वनि सुनकर उनके पीछे-पीछे सारी गोपियाँ चल रही हैं । वे एक दूसरे से कह रही हैं –

लाला की पैंजनिया बाजे रे ।

सखियाँ कहती हैं – अरी देखो ! कृष्ण की पैंजनिया कैसे बज रही है –

छुम छुम छुम छुम छननननन,
यशुमति सुत को चलनो सिखावैं ।

मैया अपने लाला को चलना सिखा रही हैं । पाँवों में पैंजनिया बज रही है । गोपियाँ कृष्ण के पीछे-पीछे चल रही हैं और आपस में कह रही हैं कि लाला की पैंजनिया कैसी मीठी बज रही है । उधर से कोई नया ब्रजवासी जा रहा था । छोटा बच्चा किसी नये व्यक्ति को भोलेपन से घूर-घूर कर देखता है कि यह कौन है ? इसी तरह छोटे से कृष्ण-बलराम भी नये ब्रजवासी को मुग्ध होकर बड़े भोलेपन से देखने लगे कि कोई नया व्यक्ति आया है । वह व्यक्ति उनको बुलाने लगा । जब कृष्ण-बलराम उसके पास पहुँचे और ध्यान से उसका मुख देखने लगे कि यह हमारी यशोदा मैया है कि नन्दबाबा है कि रोहिणी मैया है । फिर जब और ध्यान से देखा तो उन्हें समझ में आ गया कि यह न तो नन्दबाबा हैं, न यशोदा मैया हैं, और न ही रोहिणी मैया हैं । यह तो कोई और है तो तुरन्त ही दोनों भाग गये । डर से दोनों भागे कि ये तो पता नहीं कौन है और भागकर अपनी माताओं के पास चले गये ।

'मुग्धप्रभीतवदुपेयतुरन्ति मात्रोः' – (श्रीभागवतजी - १०/८/२२)

महाप्रभु वल्लभाचार्यजी, जो कि वात्सल्य लीला के आचार्य हैं, वे अपनी टीका सुबोधिनी में उपर्युक्त श्लोक में प्रयुक्त शब्द 'उपयेतु' का अर्थ करते हैं कि दोनों बालक कृष्ण-बलराम भय से घबराकर, भागकर अपनी माताओं के ऊपर गिर पड़े । यशोदाजी व रोहिणीजी ने अपने बालकों को गोद में ले लिया और पूछने लगीं कि तुम लोग बाहर क्यों गये, यहीं अपने घर में ही खेला करो । दोनों चंचल हैं, इसलिए बाहर चले जाते हैं । दोनों बालक जब भयभीत होकर अपनी माताओं के पास आ गये तो वे अपने बालकों को स्तन पान कराने लगीं ।

वल्लभाचार्यजी लिखते हैं कि दोनों बालक अपनी माताओं के पास कैसे आते हैं ? वे लिखते हैं कि कभी तो ये बालक नाचते-नाचते आते हैं । उन्होंने पाँच प्रकार के नृत्य लिखे हैं । श्यामसुन्दर पाँच प्रकार से नृत्य करते हुए यशोदा मैया के पास आते हैं और उनके ऊपर गिर पड़ते हैं । वे बड़े कौतुकी हैं, बाल लीला का इस तरह से विस्तार करते हैं । **'पङ्काङ्गरागरुचिरा'** – पङ्काङ्गरागरुचिर का मतलब है कि ब्रज की कीच अंगराग बनकर कृष्ण-बलराम के अंगों पर सुशोभित होती है । इससे पता चलता है कि ब्रज की भूमि दिव्य है । 'ब्रज की कीच' कीच नहीं है, अंगराग है, फूलों का पराग है । श्यामसुन्दर ने यहाँ लीला की है तो यह भूमि दिव्य है । सारा ब्रज धाम दिव्य है । कीचड़ के अंगराग से सुशोभित अंगों वाले बालक कृष्ण-बलराम को माताएँ गोद में लेकर हृदय से लगा लेती थीं, उन्हें लिपटा लेती थीं । यहाँ भी वल्लभाचार्यजी ने लिखा है कि कभी तो मैया लिपटा लेती थीं और कभी वे स्वयं लिपट जाते थे । माता बालक को लिपटाये या न लिपटाये, बालक स्वयं ही माता से लिपट जाता है ।

दत्त्वा स्तनं प्रपिबतोः स्म मुखं निरीक्ष्य मुग्धस्मिताल्पदशनं ययतुः प्रमोदम् ।

(श्रीभागवतजी - १०/८/२३)

यशोदा मैया अपने लाड़ले कन्हैया को स्तन पान कराती हैं तो उनके मुख को देखती हैं । उनका मुख कैसा है, इसका ध्यान करो; यही मुख्य वस्तु है । **'मुग्धस्मिताल्पदशनम्'** – उनके मुख में छोटी-छोटी सी दूध की दँतुलियाँ हैं, उन्हें यशोदा मैया देखती हैं और देखकर अत्यन्त प्रसन्न होती हैं । वल्लभाचार्यजी यहाँ फिर लिखते हैं कि कन्हैया के मुख में दँतुलियों की शोभा कैसी है – **क्षीरकणसहिता** । दँतुलियाँ तो छोटी-छोटी हैं ही, ऊपर से यशोदारानी के स्तन के दूध के कण उन दँतुलियों के ऊपर लगे हैं, उससे उनके दाँत और भी श्वेत हो गये हैं । नीले श्यामसुन्दर के मुख में दूध से सने हुए श्वेत दाँत मोतियों की तरह चमक रहे हैं, मैया उस छटा को देख रही हैं और सोच रही हैं कि मेरा दूध इसके दाँतों में चिपक रहा है । इसके कारण इसके दाँत कितने सुन्दर लग रहे हैं ।

यर्ह्यङ्गनादर्शनीयकुमारलीला - वन्तर्व्रजे तदबलाः प्रगृहीतपुच्छैः ।

(श्रीभागवतजी - १०/८/२४)

सुबोधिनिकार महाप्रभु वल्लभाचार्यजी लिखते हैं कि अब श्यामसुन्दर दो वर्ष के हो चुके हैं । गोपियाँ अपने घरों के कार्य, चौका-चूल्हा आदि सब छोड़ करके श्यामसुन्दर की कुमार लीला का दर्शन करने के लिए आ जाती थीं । वल्लभाचार्यजी लिखते हैं कि अपनी लीला शक्ति से प्रभु केवल दो वर्ष के ही नहीं हैं, उसके आगे की भी लीला कर रहे हैं । कुछ गोपियाँ तो श्रृंगार रस में भी आविष्ट हो गयी थीं, क्यों ? वल्लभाचार्यजी ने कुमार शब्द का अर्थ दिया है – **कुत्सितः मारः यस्मात्** – **कुत्सितो मारो यस्मादिति** – अर्थात् श्यामसुन्दर को देखकर कामदेव भी बुरा लग रहा है, बदसूरत लग रहा है । इसी भाव को नारायण स्वामीजी ने भी लिखा है कि जिस समय नन्दनन्दन संध्या समय नन्द भवन के सामने आकर खड़े हुए, उसी समय चन्द्रमा भी निकला बड़े अहंकार के साथ कि मैं ही सुन्दर हूँ । एक गोपी ने दूसरी गोपी से कहा कि एक नन्द का लाला है, वह वंशी अत्यन्त मधुर बजाता है । सुबह नन्द भवन से निकलकर आता है । दूसरी गोपी ने कहा कि तू मुझे उसका दर्शन करा दे । अतः वह गोपी अपनी सखी को नन्द लाला के दर्शन कराने ले गयी । नन्दभवन में नन्द नन्दन खड़े थे । दूसरी ओर से गोपी अपनी सखी को उनका दर्शन करा रही थी और उधर आसमान में चन्द्रमा निकला । यह छटा है । इसका वर्णन नारायण स्वामी जी करते हैं –

देख सखी नव छैल छबीलो ।

अरी सखी ! इस नये छैल छबीले को देख । दो वर्ष के श्यामसुन्दर हैं किन्तु अपनी लीला शक्ति से एक साथ अनेक लीलायें कर रहे हैं

देख सखी नव छैल छबीलो ।
प्रात समय इत ते नित आवै ।

गोपी अपनी सखी से कहती है – 'यही है नन्द नन्दन, प्रातः काल यह नित्य ही यहाँ आता है ।'

राधाकुण्ड कृष्ण कुण्ड गिरि गोवर्धन ।
मधुर मधुर बंसी बाजे, शेई तो वृन्दावन ॥

गोपिकाओं का जीवन-सार 'श्रीकृष्णलीलारस'

ब्रजगोपिका कहती है – **'कमल समान बड़े दृग जाके ।'**

'सखि ! ध्यान से देख, इसके नेत्र कमल से भी अधिक सुन्दर हैं ।' सखी कहती है – 'हाँ, बात तो ठीक है; इसके नेत्र तो ऐसे हैं कि एक बार देखो तो देखते ही रह जाओ ।' **'मुख छबि लखि द्युति चन्द्र लजावै ।'**

'सखि देख, इधर चन्द्रमा निकला और कृष्णचन्द्र को देखकर लज्जित हो गया । **'जाकी सुन्दरता जग बरनत, श्याम सलोनो मृदु मुसुक्यावे ।'** अरी सखि, श्यामसुन्दर कैसे मुस्कुराते हैं, इनकी मुस्कान तो देख । **'नारायण ये द्यौं यही वही है, जो यशुमति को लाल कहावै ।'** सखी, ये वही है, तू पहचान गयी ।' श्रीवल्लभाचार्यजी लिखते हैं – **'कुत्सितः मारः यस्मात्'** इनके छः अंगों से एक साथ श्रृंगार रस की भी लीला हो रही है । वल्लभाचार्यजी लिखते हैं कि तीन प्रकार की गोपियाँ हैं – कौतुकाविष्ट गोपी, रसाविष्ट गोपी, कामाविष्ट गोपी । कौतुकाविष्ट गोपियाँ तो श्रीकृष्ण के कौतुक देखने आती हैं, वे कहती हैं – 'यह तो बड़े आश्चर्य की बात है, यह नन्दलाल कितना चंचल है ।' रसाविष्ट गोपियाँ वे हैं, जो वात्सल्य रस की अनुभूति के लिए आती हैं । ये भी दौड़-दौड़कर कृष्ण लीला का दर्शन करने आती हैं । एक गुप्त लीला है, कामाविष्ट गोपियाँ कृष्ण को देखकर काम में आविष्ट हो जाती हैं । इसलिए ब्रज में एक साथ, एक कालावच्छिन्न अनेक लीलायें हो रहीं हैं । ऐसा इसलिए है क्योंकि श्रीकृष्ण का विग्रह चिन्मय है ।

यर्ह्यङ्गादर्शनीयकुमारलीला -वन्तर्व्रजे तदबलाः
प्रगृहीतपुच्छैः । वत्सैरितस्तत उभावनुकृष्यमाणौ
प्रेक्षयन्त्य उज्झितगृहा जह्यषुर्हसन्त्यः ॥

(श्रीभागवतजी - १०/८/२४)

ब्रज के भीतर बछड़े खड़े थे । **अन्तर्व्रजे तदबलाः प्रगृहीतपुच्छैः** – (श्रीभागवतजी - १०/८/२४) कृष्ण ने एक बछड़े की पूँछ पकड ली । बछड़ा बहुत प्रसन्न हुआ और वह कूदने लग गया । कृष्ण उसके पीछे-पीछे खिंचने लगे । **वत्सैरितस्तत** - बछड़ा कूद रहा है और कृष्ण-बलराम उसकी पूँछ पकड़कर खींच रहे हैं । दोनों भाई 'हुँ-हुँ' – ऐसी ध्वनि कर रहे हैं और बछड़े आगे चल रहे हैं । इस प्रसंग में श्रीजीव गोस्वामीजी लिखते हैं – **'त्रिचतुःपुच्छग्रहणाद्वा'** कृष्ण ने एक साथ कई बछड़ों की पूँछ पकड रखी है । कोई इधर खींचता है, कोई उधर खींचता है । **'प्रेक्षन्त्य उज्झितगृहा जह्यषुर्हसन्त्यः'** (श्रीभागवतजी - १०/८/२४)

सब गोपियाँ अपना कामकाज छोड़कर कृष्ण-बलराम की ऐसी लीला देखकर जोर-जोर से हँसने लगती थीं । नन्दभवन में बैठी हुई वे कृष्ण की ऐसी लीला देखकर हँसते-हँसते लोटपोट हो जाती थीं । यशोदा मैया ने जाकर अपने कन्हैया को बछड़े से अलग किया और कहने लगीं कि यह बड़ा नटखट है । बछड़े के पास से वे कन्हैया को छुड़ाकर लायीं ।

श्रृङ्गयग्निदंष्ट्रयसिजलद्विजकण्टकेभ्यः
क्रीडापरावतिचलौ स्वसुतौ निषेद्धुम् ।
गृहाणि कर्तुमपि यत्र न तज्जन्यौ
शेकात आपतुरलं मनसोऽनवस्थाम् ॥

(श्रीभागवतजी - १०/८/२५)

थोड़ी देर बाद कन्हैया एक बैल के पास पहुँच गये । ब्रज के सभी जीव कृष्ण से प्रेम करते थे । कृष्ण को देखकर बैल ने अपना सिर झुका दिया तो उन्होंने उसका सींग ही पकड़ लिया । अब बैल सींग से धीरे-धीरे उनके शरीर को खुजलाने लगा कि कहीं इनके लग न जाए । बैल भी कन्हैया को जानता था । यशोदा मैया दौड़कर गयीं और कन्हैया को बैल के पास से ले आयीं और कहने लगीं कि बैल की सींग कहीं लाला के पेट में लग जाए, पेट फट जाये तो क्या होगा, यह छोरा कितना चंचल है ।

'श्रृङ्गयग्निदंष्ट्रयसिजलद्विजकण्टकेभ्यः'

(श्रीभागवतजी - १०/८/२५)

यह कृष्ण की लीला है । इसी के लिए परमहंस मुनिजन तरसते हैं ।

एक बार कहीं पर आग जल रही थी तो कृष्ण उसकी आँच देखकर दौड़े, उनके पीछे मैया भी दौड़ीं, पकड लिया और कहने लगीं – 'देखो, अब ये आग से खेलेगा,

कहीं जल गया तो क्या होगा ?' मैया कन्हैया को आग से छुडाकर लायीं तो शुकदेवजी कहते हैं – **दंष्ट्र** – दाँत से काटने वाले पशु । जीवगोस्वामीजी लिखते हैं – '**कुक्कुरादयः**' – कुत्ते आदि अर्थात् कन्हैयाजी कुत्ते के पास पहुँच गये । **कुक्कुरः वानरः** – कुत्ते और बन्दर भी श्यामसुन्दर के पास खेलने पहुँच गये ।

परमानन्ददास को ठाकुर, लायो पिल्ला घेर ।

यह सब आचार्यों का अनुभव है । बाल कृष्ण छोटे से पिल्ले को पकड़ लाये और उससे खेलने लगे । सब गोपियाँ हँसने लगीं और कहने लगीं कि पिल्ला कहीं काट ले तो क्या होगा ? पिल्ला कन्हैया को काटता नहीं है, वह भी उनसे प्यार करता है । वह भी मुँह घुमा-घुमाकर कन्हैया को चाटने का प्रयास कर रहा है, खेलने के लिए अपने दाँत कन्हैया के शरीर से छुआ रहा है । इतने में बन्दर आ गये, कन्हैया उनके मुख को पकड़कर खेल रहे हैं । बन्दर तो प्रभु के पुराने भक्त हैं, ये उन्हें काट नहीं सकते । बन्दरों को कन्हैया बुला रहे हैं – 'ओ बन्दर ! इधर आ । अपने दाँत दिखा ।' बन्दर मुँह खोल देता है तो कन्हैया उसके दाँत गिनते हैं । यशोदा मैया बन्दर से उन्हें छुडाकर लाती हैं । '**असि**' – कुछ आचार्यों ने 'असि' का अर्थ सर्प भी लिखा है तो कहीं इसका अर्थ तलवार किया है ।

यशोदाजी व रोहिणीजी चकई की तरह कृष्ण-बलराम के पीछे दौड़ती रहती थीं । पहले वे उन दोनों को बैल से छुडाकर लायीं । आग, कुत्ता, बन्दर से छुडाकर लायीं तो चुपके से ये दोनों नन्दबाबा की बैठक में घुस गये और तलवार निकाल ली । रोहिणी मैया ने देखा तो बोलीं – 'अरे, गजब हो गया ।' दौड़कर गयीं और तलवार उनके हाथ से छीनी तथा बोलीं – 'अरे लाला ! हाथ कट जायेंगे तेरे ।' कुछ आचार्य असि का अर्थ सर्प मानते हैं । भगवान् को देखकर सर्पादि विषैले जन्तु भी मस्त हो गये, उनमें अहिंसा का भाव आ गया । सर्प श्यामसुन्दर के पास आ गये और फन उठाकर उनके पास बैठ गये । कन्हैया उनके फन पर धूल फेंकने लगा और फन को हाथ से ठोंकने लगा । सर्पों को आनन्द आ गया । ये सर्प कन्हैया को नहीं काटते थे । नन्द का लाला ऐसा पैदा हुआ कि इसे न तो बन्दर काटे, न कुत्ता काटे, न बैल मारे और न ही सर्प काटे क्योंकि यह कृष्ण है । सभी जीव कृष्ण के जादू से ऐसा मोहित हो गये कि जिसका वर्णन ही नहीं किया जा सकता । यशोदा मैया ने कन्हैया को सर्प के पास देखा तो सर्प से कहने लगीं – 'अरे, नाग देवता, तुम जाओ, मेरे कन्हैया को मत हानि पहुँचाना ।' मैया की बात समझकर सर्प चले गये । साँप से छुडाकर मैया लायीं तो घर के पास ही कुण्ड था । कन्हैया वहीं दौड़कर चले गये और कुण्ड के जल से छप-छप करके खेलने लगे । दोनों भैया कृष्ण-बलराम कुण्ड के जल से जब इस प्रकार खेलने लगे तो यशोदाजी रोहिणीजी से बोलीं – 'अरी रोहिणी दौड़ो, देखो, ये बालक कहीं कुण्ड में न गिर जाएँ ।' रोहिणीजी दौड़कर गयीं और दोनों बालकों को कुण्ड से लेकर आयीं तथा बोलीं – 'बच गये, नहीं तो अभी कुण्ड में दोनों डूब जाते ।' एक आचार्य लिखते हैं कि जल से मतलब है कि यशोदा रानी ने जल से भरा कलश रखा था । बलराम पहले उसके पास पहुँचे, उन्होंने उस कलश को हिलाया तो नहीं हिला । उसी समय कन्हैया भी वहाँ पहुँच गये और कहने लगे – 'हूँ-हूँ' अर्थात् मैं आऊँ, मैं आऊँ, तुझसे कलश नहीं गिरेगा । दोनों भाई मिलकर कलश को हिलाने लगे और फिर उसे लुढका दिया । अब उस कलश का पानी जब फैला तो दोनों बालक उसमें हाथ मारकर छपाछप खेलने लगे । यशोदाजी दौड़ीं और बोलीं – 'अरे, इन दोनों ने सारा पानी फैला दिया ।'

इस प्रकार दोनों ने जल क्रीड़ा की । '**द्विजकण्टकेभ्यः**' – नन्द भवन में सभी जीव आते थे । पक्षी भी आते थे । हंस, मोर, तोते, कौवे आदि सभी प्रकार के पक्षी श्रीकृष्ण का दर्शन करने आते थे । एक बार एक हंस आया तो उसे देखकर कृष्ण-बलराम दौड़ गये । दोनों छोटे से बालक जाकर हंस पर चढ़ गये । ये हंस भी तो भगवान् की लीला के सहायक पार्षद हैं । वे कृष्ण को अपने शरीर पर चढ़ाकर धीरे-धीरे टहलने लगे । मैया ने देखा तो सोचने लगीं कि कहीं ऐसा न हो कि हंस मेरे बालक को लेकर उड़ जाए या यह हंस कहीं कंस का भेजा हुआ असुर तो नहीं है । देखो, ये बालक कितने ढीठ हैं । जाने कौन से देश का हंस है और ये दोनों उस पर जाके चढ़ गये । मैया गयीं और दोनों बालकों को डाँटा – 'चल उतर, सब पर ये

चढ़ जाते हैं । कुत्ता-बन्दर सभी पर चढ़ जाते हैं ।' वहाँ से मैया छुड़ाकर लायीं तो दूसरी ओर से मोर आ गये और अपनी बोली बोलने लगे । कृष्ण-बलराम दोनों बालक मोरों के पास दौड़ गये । कृष्ण ने मोर की गर्दन पर हाथ रख दिया और मोर की आवाज की नकल करने लगे । इस प्रकार ये दोनों बालक पक्षियों से खेल रहे थे । इनकी यह लीला सब गोपियाँ देख रहीं थीं । एक दिन ये दोनों बालक नन्द भवन के पीछे गये तो वहाँ काँटों की बाड़ लगी हुई थी । दोनों भैया काँटों के पास पहुँच गये । दोनों की झंगुलियों में काँटे लग गये । यशोदाजी ने दूर से देखा तो चिल्लायीं – 'अरे, अब तो ये काँटे में घुस गये ।' वहाँ गयीं और दोनों बालकों की झंगुलियों से काँटे निकालकर उन्हें घर लायीं, डाँटती भी जा रही थीं – 'वहाँ तू क्यों गया था ?'

'क्रीडापरावतिचलौ स्वसुतौ निषेद्धुम्'

(श्रीभागवतजी - १०/८/२५)

सबेरे से शाम तक दोनों माताएँ अपने बालकों को रोकने में ही लगी रहतीं – 'यहाँ मत जाओ, वहाँ मत जाओ ।' इधर से पकड़तीं तो दूसरी ओर भाग जाते, उधर पकड़तीं तो कहीं और भाग जाते । अनन्त ब्रह्म को वे सीमा में बाँधने का प्रयास करतीं ।

'गृह्याणि कर्तुमपि यत्र न तज्जनन्यौ' (श्रीभागवतजी - १०/८/२५)

दोनों माताएँ बालकों की चंचलता के कारण घर का काम भी नहीं कर पाती थीं । **'मनसोऽनवस्थाम्'** – उनका मन बच्चों की चिन्ता से चंचल रहता था । श्रीजीवगोस्वामीजी ने यहाँ चंचल का भाव लिखा है कि चंचल का मतलब यह मत समझना कि वे घबरा गयीं, दुखी हो गयीं । यह सञ्चारी भाव है । यहाँ वात्सल्य स्थायी भाव है । वात्सल्य जो स्थायी भाव है, उसमें यहाँ पर सञ्चारी भाव 'अनवस्था' है । इसका मतलब यह मत समझना कि वे दोनों माताएँ उकता गयीं, परेशान हो गयीं । यह तो प्रेम की तरंग है । कुछ ही दिनों में राम-श्याम दोनों बालकों की और प्रगति हुई –

अब धीरे-धीरे ये दोनों बालक खड़े होकर चलने का प्रयास करने लगे । यशोदाजी और रोहिणीजी उन्हें अँगुली पकड़कर चलाने लगीं । कभी यशोदा जी उँगली पकड़कर चलातीं तो कन्हैया थोड़ी देर चलकर फिर लड़खड़ाकर गिर पड़ते । इस प्रकार माताओं का सहारा लेकर उनके बालक धीरे-धीरे चलने लगे ।

यशुमति सुत को चलनो सिखावै ।
उंगली पकर लाला की पैंजनिया बाजै ।

यशोदाजी और रोहिणीजी कृष्ण को चलना सिखाने लगीं । एक ओर यशोदाजी ने श्रीकृष्ण की उँगली पकड़ी, दूसरी ओर रोहिणीजी ने पकड़ा और इस तरह वे श्रीकृष्ण को चलाने लगीं और कहती जातीं – 'लाला ! ऐसे चल, लाला आगे चल ।' इस प्रकार यह मधुर लीला होने लगी । **ततस्तु भगवान् कृष्णो वयस्यैर्व्रजबालकैः ।**
सहरामो व्रजस्त्रीणां चिक्रीडे जनयन् मुदम् ॥

(श्रीभागवतजी - १०/८/२७)

कुछ दिनों के बाद श्रीकृष्ण और बलराम अपनी ही आयु के बालकों के साथ खेलने लगे । अब तो वे खूब दौड़ने लगे । गेंद भी खेलने लगे । जब श्रीकृष्ण चलने लगे तो उन्होंने सोचा कि अब मुझे माखन चोरी करनी चाहिए । अभी तक तो चोरी इसलिए नहीं की थी क्योंकि तब चल नहीं सकते थे, भाग नहीं सकते थे । चोर को तो चोरी करके भागना पड़ता है, इसलिए अब वे चोरी करने लगे । **कृष्णस्य गोप्यो रुचिरं वीक्ष्य कौमारचापलम् ।**

अब तो श्रीकृष्ण ने बड़ी चंचलता करना शुरू कर दिया । उनकी चंचलता के कारण गोपियाँ उनकी शिकायत करने के बहाने नन्दभवन में जातीं है और खूब मन भरकर श्रीकृष्ण की रूप-छवि का आस्वादन करती हैं क्योंकि उन ब्रजदेवियों के जीवनप्राण-सर्वस्य ही श्रीनन्दनन्दन हैं; इसलिए वे सभी प्रेमाराधिकाएँ 'श्रीश्यामसुन्दर' के दर्शन-स्पर्श व स्मरण के बिना एक क्षण भी नहीं रह सकती हैं ।

गौ–सेवकों की जिज्ञासा पर माताजी गौशाला का Account number दिया जा रहा है –

SHRI MATAJI GAUSHALA, GAHVARVAN,BARSANA, MATHURA

Bank – Axis Bank Ltd , A/C – 915010000494364

IFSC – UTIB0001058 BRANCH – KOSI KALAN,

MOB. NO. – 9927916699

माताजी गौशाला में
गुरुपूर्णिमा उत्सव के दृश्य

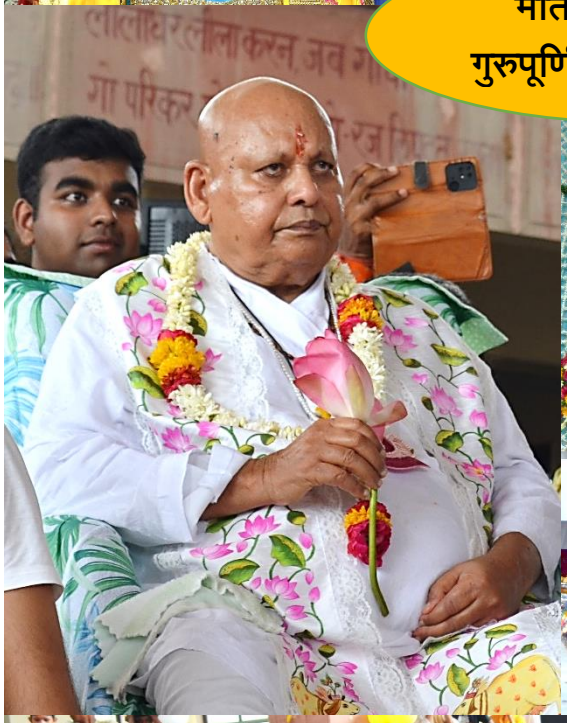

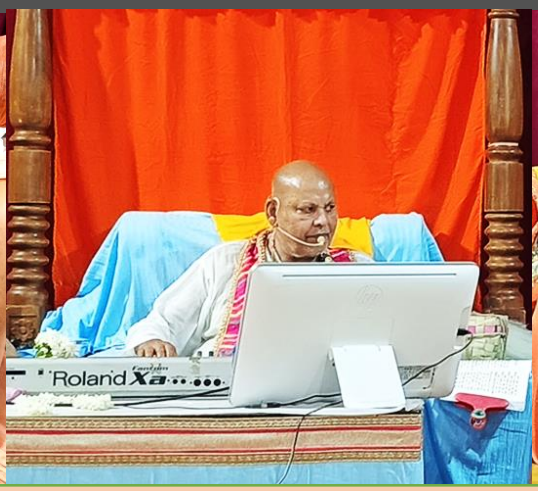

मलूकपीठाधीश्वर श्रीराजेन्द्रदासजी महाराज पूज्य श्रीबाबा महाराज से भेंट करते हुए

गुरुपूर्णिमा पर्व पर देश के गणमान्य कलाकारों द्वारा संगीत-प्रस्तुति

RNI REFERENCE NO. 1313397- REGISTRATION NO. UP BIL-2017/72945-TITLE CODE UP BIL-04953 POSTAL REGD.NO. 093/2021-2023
श्री मान मन्दिर सेवा संस्थान के लिए प्रकाशक/मुद्रक एवं संपादक राधाकांत शास्त्री द्वारा गुप्ता ओफ़्सेट प्रिंटर्स A- 125/1 , wazipur industriyal area, new delhi- 52 से मुद्रित एवं मान मन्दिर सेवा संसथान, गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.) से प्रकाशित [AGRA/WPP-12/2021-2023 AT 22.12.23]